अगस्त 2020

₹ 20

समाजवादी बुलेटिन

किसान विरोधी काला कानून

10

नई शिक्षा नीति

हल्ला है ज्यादा, नियत है खराब

4

मोदी राज में

सार्वजनिक क्षेत्र का हाल

25

R.N.I. No. 68832/97

शहीदों के अरमानों को पूरा करना है तो समाजवादी आंदोलन को मजबूत करना होगा। दुनिया के जितने दुख-दर्द हैं वे समाजवादी व्यवस्था से ही दूर हो सकते हैं, दूसरा और कोई रास्ता नहीं है।

मुलायम सिंह यादव
संस्थापक-संरक्षक, समाजवादी पार्टी

समाजवादी बुलेटिन

अगस्त 2020

वर्ष 21 | संख्या 10

प्रिय पाठकों,

समाजवादी बुलेटिन का यह नया अंक बदले हुए रंग-रूप और कलेवर में आपके हाथों में है । इसमें समाचार के साथ विचार का संतुलन बनाये रखते हुए आपके लिए पठनीय सामग्री को हर पन्ने पर समेटा गया हैं। हम निरंतर ऐसी ही सामग्री लेकर आयेंगे। आशा हैं आपको बुलेटिन का यह नया रूप पसंद आयेगा। आपकी प्रतिक्रिया की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक

प्रोफेसर रामगोपाल यादव

☎ 0522 - 2235454

samajwadibulletin19@gmail.com

bulletinsamajwadi@gmail.com

Mob:- 9598909095

/samajwadiparty

समाजवादी पार्टी के लिए

19, विक्रमादित्य मार्ग, लखनऊ से प्रकाशित

आस्था प्रिंटर्स, गोमती नगर, लखनऊ से मुद्रित

R.N.I. No. 68832/97

अंदर

किसानों को गुलाम बना रही भाजपा 22

10 कवर स्टोरी

नई गुलामी का पैगाम हैं नए कृषि कानून

नई शिक्षा नीति 04

हल्ला है ज्यादा, नियत है खराब

मोदी राज में सार्वजनिक क्षेत्र का हाल 25

नई शिक्षा नीति

नाम बड़े पर दर्शन छोटे

ऋचा सिंह
पूर्व छात्र संघ अध्यक्ष, इलाहाबाद केंद्रीय विवि

बहुत शोर सुनते थे पहलू में दिल का जो चीरा तो क़तरा-ए-ख़ूं न निकला

नई शिक्षा नीति, 2020 का हाल भी अली आतिश के इस शेर सरीखा है। नई शिक्षा नीति का दस्तावेज इसी उम्मीद में समाप्त हो जाता है कि शायद अगले पेज पर "शिक्षा व्यवस्था" को मजबूत करने के लिये कुछ सुझाव ऐसे होंगे जिनमें नीतियों पर दस्तावेज़ी चर्चा न होकर उनके अनिवार्य क्रियान्वयन के लिये कुछ नियमों को बनाने की बात होगी। लक्ष्यों को प्राप्त करने लिये एक समय सीमा तय की गयी होगी। परंतु नई शिक्षा नीति का दस्तावेज शब्दजाल, आडंबर और जनता को गुमराह करने के सिवाय कुछ भी नहीं है। पुरानी व्यवस्था में कोई आमूल-चूल परिवर्तन नई शिक्षा नीति में नज़र नहीं आता।

भाजपा सरकार इस बात को समझने में पूरी तरह से नाक़ाम है कि किसी भी देश में शिक्षा और स्वास्थ्य पर लगाया गया धन निवेश होता है, खर्च नहीं! क्योंकि शिक्षित और स्वस्थ नागरिक समाज की अमूल्य संपदा होती है। शिक्षा और स्वास्थ्य सरकार का प्रथम दायित्व होता है जिसपर किसी भी राष्ट्र का निर्माण टिका होता है।

नई शिक्षा नीति 2020 के 4 भाग और 27 अध्याय हैं जिसके पहले अध्याय के पूर्व प्रस्तावना है। यह प्रस्तावना भाजपा के उस चेहरे का प्रतिबिंब है, जो राजनीतिक स्वार्थ के लिये आम आदमी की भावनाओं का सिर्फ़ विज्ञापन करती है लेकिन वास्तविकता में सिर्फ़ पूंजीपतियों को संरक्षित करती है, जिसे आम जन मानस की तकलीफों, हितों और समाज के अंतिम व्यक्ति को मुख्य धारा में शामिल करने के सवालों से कोई सरोकार नहीं है।

पूर्व में शैक्षणिक संस्थानों में आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए निर्धारित 25 प्रतिशत आरक्षित सीटों या आरक्षण का प्रावधान था परन्तु नयी शिक्षा नीति इसका कहीं ज़िक्र नहीं , है जो जनता के साथ बड़ा धोखा है।

नीति बनाम कानून

नई शिक्षा नीति के पहले भाग में 'प्राथमिक शिक्षा' की बात तो की गई पर उसे कानूनसम्मत बनाने की बात नहीं की गयी है। पूर्व के सर्व शिक्षा अभियान के अनुसार 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा कानून और मूल अधिकार था। इसको बदलकर 'समग्र शिक्षा' किया जा रहा है और दावा है कि इसके तहत 3 से 18 वर्ष तक के बच्चों को शामिल किया जायेगा। लेकिन 'समग्र शिक्षा' के इस अभियान को नई शिक्षा नीति के अंतर्गत कानून बनाने की बात नहीं की जा रही है। 3 से 18 वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इसे क़ानूनी रूप से अनिवार्य बनाने या सुनिश्चित करने के संबंध में यह नीति स्पष्ट नहीं है। सरकार को चाहिये की वह 3 से 18 वर्ष तक मुफ़्त एवं अनिवार्य शिक्षा को अविलम्ब कानून बनाकर लागू करे अन्यथा इसका हाल भी सरकार की अन्य सजावटी योजनाओं जैसा हो जायेगा।

इस शिक्षा नीति में सरकार ने शिक्षा के मूलभूत अधिकार को विस्तारित करने का प्रदर्शन तो किया है लेकिन वास्तविकता में शिक्षा के मूल अधिकार को कमतर कर दिया है। जबकि पूर्व में शैक्षणिक संस्थानों में आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए निर्धारित 25 प्रतिशत आरक्षित सीटों या आरक्षण का प्रावधान था परन्तु नयी शिक्षा नीति इसका कहीं ज़िक्र नहीं , है जो जनता के साथ बड़ा धोखा है।

समाज के वंचित तबकों (दलितों -पिछड़े और अल्पसंखयक वर्गों) से आने वाले छात्रों के लिए

समतामूलक शिक्षा की सुलभ पहुंच को सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा कोई रूपरेखा नई शिक्षा नीति में नहीं बनायी गयी है। समाज के वंचित तबकों को सरकार ने पूर्णतः नज़रअंदाज़ किया है। एससी, एसटी, ओबीसी छात्रों के शैक्षिक प्रोत्साहन के लिये सस्ती शिक्षा, फ़ीस माफ़ी , स्कॉलरशिप आदि के संबंध में यह नीति कुछ नहीं कहती है। जबकि सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा समाज के वंचित वर्गों के लिये विशेष प्रावधान करने आवश्यकता है। प्राथमिक स्तर पर स्कूलों के कांप्लेक्स और क्लस्टर निर्माण समेत कई सतही प्रावधानों की बातें की गयी हैं, जो वर्तमान परिवेश में पूरी तरह से अव्यवहारिक नज़र आती हैं।

बाज़ार के हवाले शिक्षा

नई शिक्षा नीति का दूसरा भाग उच्च शिक्षा के संबंध में है। इसमें हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्ड को यथावत रखा गया है पर वर्तमान शिक्षा जगत में पांव पसार चुके कोचिंग-तंत्र से लड़ने के लिए कोई योजना नहीं बनाई गई है, जो शिक्षा के व्यावसायीकरण को बढ़ावा देगी। यह कहना ज्यादा उचित होगा कि कोचिंग

वर्तमान समय में जब भारत सबसे बड़ी युवा शक्ति के रूप में उभर रहा हो, सरकार को शिक्षा में अधिक में अधिक निवेश करना चाहिये। परंतु सरकार अपनी भूमिका से पीछे हटती नज़र आ रही है जो चिन्तनीय है। यह सरकार द्वारा स्वयं को ज़िम्मेदारी से मुक्त करना और निजीकरण को बढ़ावा देने की ओर आत्मघाती कदम होगा।

सभ्यता के लिए यह शिक्षा नीति और उर्वर जमीन तैयार करेगी ।

वि्श्वविद्यालय तथा महाविद्यालयों में सेल्फ फाइनेंस कोर्सेज के बढ़ावा देने पर काफी ज़ोर दिया गया है। महाविद्यालयों को स्वायत्तता प्रदान करने की बात कही गयी गई है। साथ ही विदेशी विश्वविद्यालयों को आमंत्रित करने पर बहुत ज़ोर दिया गया है। सरकार का इसपर बहुत जोर है कि अब सरकारी विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय नए पाठ्यक्रम के माध्यमों से खुद ही पैसा जुटाएं। नई नीति में इस ओर भी इंगित किया गया है कि जल्द से जल्द उच्च शिक्षण संस्थान स्वापोषित और स्वायत्त हो जाएं जिसके लिए फीस बढ़ाना ही विकल्प है। इन फैसलों से स्पष्ट है की सरकार शिक्षा को बाजार के हाथों में सौंपकर अपनी जिम्मेदारी से पीछे हटने की तैयारी में है।

ऐसे समय में जबकि शिक्षा को सस्ता करने और

उसकी गुणवत्ता बढ़ाने के लिये सरकारी विश्वविद्यालयों में सेल्फ फाइनेंस कोर्स समाप्त करना चाहिये ताकि उच्च शिक्षा सर्वसुलभ हो, ऐसे में इस तरह के निर्णय पूरी तरह से सरकार के निजीकरण के प्रति लगाव को दिखा रहे हैं। विदेशी विश्वविद्यालयों को आमंत्रण महंगी शिक्षा और शिक्षा के व्यवसायीकरण को बढ़ावा देगा। भारत में आमंत्रित विदेशी विश्वविद्यालयों के फ़ीस नियंत्रण एवं वंचित वर्गों के प्रवेश को सुनिश्चित करने जैसी कोई बात नई शिक्षा नीति में नहीं है।

वर्तमान समय में जब भारत सबसे बड़ी युवा शक्ति के रूप में उभर रहा हो, सरकार को शिक्षा में अधिक में अधिक निवेश करना चाहिये। परंतु सरकार अपनी भूमिका से पीछे हटती नज़र आ रही है जो चिन्तनीय है। यह सरकार द्वारा स्वयं को ज़िम्मेदारी से मुक्त करना और निजीकरण को बढ़ावा देने की ओर आत्मघाती कदम होगा।

भारत-भारतीयता और स्वदेशी का नारा लगाने वाले नई शिक्षा नीति में विदेशी विश्वविद्यालयों को आमंत्रित ही नहीं कर रहे हैं बल्कि रेड कारपेट स्वागत की तैयारी के लिये माहौल तय कर रहे हैं। एक तरफ यह चरक, सुश्रुत, वाराह्मीहिर, चाणक्य, चक्रपाणि, और तिरुवल्ला जैसे विद्वान उत्पन्न करने के लिए नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला, वल्लभी जैसे विश्वविद्यालय बनाने की बात कर रहे हैं, लेकिन दूसरी तरफ़ शिक्षा नीति में विदेशी विश्वविद्यालयों के लिए नई जमीन तैयार करने पे विशेष जोर है। सवाल उठता है की क्या नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय विदेशी शिक्षा पद्धति और विदेशी निवेश से बनेंगे? एक ओर भारतीयता और संस्कृति की बात और दूसरी ओर विदेशी पूंजी पर नज़र सरकार के झूठ बोलने वाले चरित्र को दिखाती है जो कहती कुछ है और करती कुछ है।

एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि देश में बेरोजगारी अपने उच्चतम स्तर पर है तो सवाल उठता है कि क्या वर्तमान शिक्षा नीति रोजगार परक है ? क्या वर्तमान शिक्षा नीति गरीबों, पिछड़ों, वंचितों तक शिक्षा का लाभ पहुंचाएगी ? क्या वर्तमान शिक्षा नीति कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित कर पाएगी? जिसका उत्तर स्पष्टतः नकारात्मक है। अक्षर और साहित्य ज्ञान के

क्या नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय विदेशी शिक्षा पद्धति और विदेशी निवेश से बनेंगे? एक ओर भारतीयता और संस्कृति की बात और दूसरी ओर विदेशी पूंजी पर नज़र सरकार के झूठ बोलने वाले चरित्र को दिखाती है जो कहती कुछ है और करती कुछ है।

साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों को किसी तरह की औद्योगिक शिक्षा दी जाए। औद्योगिक शिक्षा की दृष्टि से यद्यपि विचार बहुत दिनों से हो रहा है किंतु अभी तक कुछ औद्योगिक शिक्षा केंद्रों के खोलने के अलावा सामान्य शिक्षा का मेल औद्योगिक शिक्षा से नहीं बैठाया गया है।

वर्तमान व्यवस्था की सच्चाई तो यह है कि तकनीकि और वोकेशनल शिक्षा केंद्रों में भी शिक्षा प्राप्त युवा इस योग्य नहीं हो पाते की वह स्वयं कोई कारोबार शुरू कर सकें। अतः तकनीकि शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने लिये सराकर के पास कोई रणनीति नहीं है। अतः आवश्यक यह है कि गांव के धंधे और व्यापार के साथ हमें शिक्षा का मेल स्थापित करना चाहिए।

शिक्षा में सरकारी निवेश की हकीकत

नई शिक्षा नीति घोषित करती है कि वह जीडीपी का 6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करेगी जबकि 34 वर्ष पूर्व राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी जीडीपी का 6% खर्च करने का प्रावधान किया गया था। जो लक्ष्य 30 साल पहले की सरकार ने निर्धारित किया था, वर्तमान में भारतीय जनता पार्टी की सरकार उससे जरा भी आगे नहीं बढ़ पाई है । बल्कि 6 सालों से सत्ता में होने के बावजूद सरकार ने शिक्षा घटाया है।

शिक्षा को लेकर सरकार की उदासीनता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जब भारत सबसे बड़ी युवा जनसंख्या के रूप में उभरता देश है ऐसे में सरकार का शिक्षा पर खर्च लगातार बढ़ने की बजाय कम होता जा रहा है। यह 2017-18 में 4.2 % के आस-पास था वह 2018-19 में बढ़ने के स्थान पर घटकर 3.1 % पर पहुंच गया है। जबकि वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो तमाम विकसित और विकासशील देशों का शिक्षा पर खर्च/निवेश हमारे शिक्षा पर खर्च से कई अधिक है।

क्यूबा जैसा देश भी अपनी जीडीपी का 12.9 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करता है। हमारा भारत महाशक्ति बन सके, आर्थिक रूप के साथ - साथ शैक्षिक/वैचारिक रूप से मजबूत हो सके, इसके लिये शिक्षा पर निवेश को बढ़ाना होगा। अतः सरकार को शिक्षा पर कम से कम जीडीपी का 10% खर्च करने का लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए और और उसे धरातल पर क्रियान्वित करना चाहिए।

आज से 185 वर्ष पूर्व लार्ड मैकाले ने एक शिक्षा नीति को जन्म दिया था जिसके परिणाम स्वरूप आत्मनिर्भरता , रोजगारपरक शिक्षा की सर्व सुलभता समाप्त हो गई। पारंपरिक शिल्प और उद्योग धंधे नष्ट हो गए और शिक्षा केवल अक्षर ज्ञान और डिग्री हासिल करने तक सीमित हो गयी तथा ज्ञान और रोजगार से दूर हो गई। इस तरह देखा जाए तो वर्तमान शिक्षा नीति लार्ड मैकाले का नया संस्करण लगती है। इस नई शिक्षा नीति से भाजपा का चरित्र झलकता है जो हमेशा एक वर्ग विशेष की चिंता करती है। जिसका जनसामान्य की समस्याओं से कोई सरोकार नहीं है।

वर्तमान समय में पूरे देश मे शिक्षा व्यवस्था बदहाल है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव है। शिक्षकों का अभाव है , इंफ्रास्ट्रक्चर का अभाव है। ऐसे में नयी शिक्षा नीति में ऑनलाइन-डिजिटल शिक्षा पर काफ़ी ज़ोर दिया गया है। परंतु बड़ा सवाल है की ऑनलाइन शिक्षा के लिये सरकार की तैयारी क्या है ? छात्रों को डिजिटली सशक्त करने की नीति पूरे दस्तावेज में कहीं नज़र नहीं आती।

ऑनलाइन शिक्षा तब तक सकरात्मक परिणाम नहीं दे सकती जब तक ऑनलाइन शिक्षा को इन्क्लूसिव नहीं बनाया जायेगा। जिसके लिये आवश्यक है कि देश में डिजिटल-डिवाइड या डिजिटल खाई को कम ही नहीं बल्कि ख़त्म किया जाये। सभी छात्रों के पास लैपटॉप/स्मार्टफोन/इंटरनेट सुलभ हो। शहर हो या गाँव, इंटरनेट कनेक्टिविटी सुनिश्चित किये बिना ऑनलाइन शिक्षा मात्र कोरी कल्पना है। जिसके लिये ज़रूरी है कि देश भर में प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी छात्रों को फ्री इंटरनेट और डिजिटल डिवाइस उपलब्ध कराये जायें वरना ऑनलाइन शिक्षा से गरीब और वंचित समाज बाहर हो जायेगा।

दरअसल ऑनलाइन शिक्षा पर अधिक निर्भरता संदेह को जन्म देती है। वर्तमान दौर में जब देश कोविड 19 के संकट से जूझ रहा है ऐसे में ऑनलाइन शिक्षा मात्र एक विकल्प हो सकती है, लेकिन इस व्यवस्था को कक्षाओं में आमने-सामने दी जाने वाली गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का विकल्प बताया जाना भारत के भविष्य के लिए अन्यायपूर्ण एवं अव्यवहारिक व्यवस्था है जो अमीर- गरीब, अंग्रेजी-हिंदी मीडियम, शहरी-ग्रामीण छात्रों के बीच असामनता की खाई को और बड़ा कर देगी।

समाजवादी सरकार ने दिखाई थी राह

श्री अखिलेश यादव जी ने समाजवादी सरकार में शिक्षा व्यवस्था को मजबूत करने के लिये महत्वपूर्ण फैसले लिये। उत्तर प्रदेश में समाजवादी सरकार ने छात्रों/ युवाओं को तकनीकी रूप से मजबूत करने, डिजिटली सशक्त करने के लिये बड़ी संख्या में 18 लाख से अधिक लैपटॉप बांटे, बेरोजगारी भत्ता दिया, लड़कियों की पढ़ाई के लिये कन्या विद्या धन दिया। प्राईमरी स्तर पर मिड डे मील, मुफ़्त किताबें, स्कूल बैग, स्कूल ड्रेस देने का प्रावधान किया, छात्र-शिक्षक अनुपात को ठीक करने के लिये प्रत्येक स्तर पर भारी संख्या में शिक्षकों को भर्ती किया। प्राथमिक विद्यालयों में 2 लाख शिक्षकों की कमी थी जिसके तहत 1,37,000 शिक्षामित्रों का नियमतिकरण किया और 68,500 शिक्षक भर्ती का
विज्ञापन पूरा किया। प्रदेश भर में कई नये विश्वविद्यालयों तथा मेडिकल कालेजों की स्थापना की गयी।

इससे उलट उत्तर प्रदेश में भाजपा सरकार आने

के बाद से अब तक कोई शिक्षक भर्ती प्रक्रिया पूरी नहीं हो पायी। शिक्षामित्रों का भविष्य अस्थिर कर लाखों युवाओं के भविष्य को अस्थिर कर दिया गया। देश में शिक्षक भर्तियां कोर्ट के हवाले हैं। लाखों पद खाली पड़े हैं। नयी भर्तियां पूरी करना तो दूर पूर्व में भर्ती शिक्षकों को भी सरकार स्वस्थ माहौल नहीं दे पा रही है। ऐसे में शिक्षा तंत्र को मजबूत कर शिक्षा को सर्व सुलभ बनाना मात्र कोरी कल्पना के सिवा कुछ नहीं। सरकार संवर्धन तो दूर वर्तमान शिक्षण व्यवस्था का संरक्षण तक नहीं कर पा रही है।

नई शिक्षा नीति पर समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष, पूर्व मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव जी का यह कथन एकदम सटीक बैठता है कि " जो सरकार सामाजिक समरसता एवं सद्भाव के सांस्कृतिक मूल्यों व संविधान के सिद्धांतों को निरंतर नष्ट कर रही है एवं उनसे स्वयं कोई शिक्षा नहीं ले रही हो वह शिक्षा- नीति में कोई भी बदलाव कर ले या मंत्रालय का नाम बदल दे उससे कुछ भी नहीं बदलने वाला।"

शिक्षा देश की मूलभूत आवश्यकता है। नई शिक्षा नीति में सरकार ने कही भी महँगी होती शिक्षा पर नियंत्रण की बात नहीं की है। बल्कि नई शिक्षा नीति में सरकार ने शिक्षा के निजीकरण और व्यावसायिकरण को स्थान देकर, शिक्षा के मूल अधिकार की भावना को चोट पहुँचायी है।

भाजपा का मूल चरित्र है कि वह वादे बड़े-बड़े करती है, सपने भी बहुत दिखाती है और जुमले भी बहुत फेंकती है। 15 लाख रुपए का वादा, 5 करोड़ रोजगार का वादा, विदेशों में जमा काला धन वापसी का वादा, चीन को सबक सिखाने का वादा। 6 साल की सरकार में भाजपा ने इनमें से एक भी अपना वादा पूरा नहीं किया। सभी खामियों के साथ ही बड़ा डर इस बात का है कि यह शिक्षा नीति भी मात्र झूठे और खोखले वादे तो नहीं साबित होगी ! शिक्षा नीति का व्यवहारिक क्रियान्वयवन होगा भी या नहीं यह बड़ा सवाल पूरे देश के सामने है।

भारतीय जनता पार्टी, नयी शिक्षा नीति में निम्न पंक्तियों को ही चरितार्थ करती नज़र आ रही है:

"नज़र आती नहीं मुफ़लिस की आँखों में तो खुशहाली
कहाँ तुम रात-दिन झूठे उन्हें सपने दिखाते हो"

नई गुलामी का पैगाम हैं नए कृषि कानून

अरविन्द मोहन
वरिष्ठ पत्रकार, लेखक

पता नहीं कालिदास द्वारा पेड़ की उसी डाल को काटने का किस्सा कितना सच है जिस पर वह बैठे थे, लेकिन देश में 'अच्छे दिन' लाने से लेकर हजार वायदे करने और सपने दिखाने वाले नरेन्द्र मोदी की सरकार ने तीन कृषि कानूनों के साथ जो कुछ करने का प्रयास किया है वह साक्षात कालिदास वाले प्रयोग का अनुभव हम सबको कराता है। अपने अब तक के करीब छह साल के शासन में नोटबन्दी और जीएसटी जैसी अनेक बेसिर पैर की नीतियों और फ़ैसलों से अर्थव्यवस्था को चौपट कर चुकी मोदी सरकार ने कोरोना के नाम पर जिस जल्दबाजी में लॉकडाउन किया उसने अर्थव्यवस्था की कमर तोड़ दी।

जीडीपी की गिरावट चौबीस फीसदी तक हुई यह सरकारी आंकड़े ही बताते हैं जबकि मोदी राज के आंकड़े भी अविश्वसनीय होते गए हैं और यह सारी दुनिया को दिखता रहा है कि कांग्रेसी राज से लेकर अभी तक चले भूमंडलीकरण के अभियान(जो अनिवार्यत: खेती किसानी और गरीब विरोधी है) में भी हमारे किसानों ने पेट काटकर, भूखे रहकर भी जिस खेती को बचाए रखा उसी ने इस कोरोना काल मे देश को स्थिरता दी, सबका पेट भरा और अर्थव्यवस्था को सहारा दिया। वह हमारे सकल घरेलू उत्पादन का एकमात्र घटक है जिसमें इस कोरोना काल में भी विकास हुआ है। मोदी जी को शायद इससे चिढ़ है। कोई भी संवेदनशील व्यक्ति किसानों का एहसान मानता, इस संकट की घड़ी में मुल्क और खास तौर से ग़रीबों का पेट भरने वाले इस क्षेत्र की परेशानियां दूर करने की कोशिश करता। उनके लिए बोनस जैसा कुछ घोषित करता, लेकिन हमारे प्रधानमंत्री, जिनका किसानों से लागत से दोगुना कीमत का वायदा बाकायदा चुनाव घोषणापत्र में है, ने बीच कोरोना काल में जून के महीने में ही खेती के लिए जिन तीन अध्यादेश की पहल की उसका तभी से हर स्तर पर विरोध शुरू हुआ।

सरकार ने किसानों और राजनैतिक दलों के विरोध की तो नहीं ही परवाह की, अपने गठबंधन के सबसे पुराने और भरोसेमंद साथी, अकाली दल के विरोध को भी दरकिनार किया। फिर इसी कोरोना काल में पचास पाबंदियों के बीच बुलाए संसद के अधिवेशन में तीन विधेयक पास करके इन्हें कानूनी रूप दे दिया। सबको जान की पडी है, मुल्क को महामारी की पडी है और हमारे प्रधानमंत्री को इसमें किसानों के हित पर चोट करने (और औद्योगिक मजदूरों के लिए बने सारे कानूनों को बेमानी करने) की जल्दबाजी क्यों है यह समझना मुश्किल नहीं है। इनसे यह साफ होता है कि असल में वे किसके हित में काम करते हैं और बाजार तथा पूंजीपति जमात का हित साधने के लिए वे लोकलाज भी भूल गए हैं।

पहला नया कानून दशकों से चली आ रही कृषि उत्पादों की खरीद और फसलों के समर्थन मूल्य की व्यवस्था को खत्म करने वाला है। इसे किसानों को 'दलालों' से मुक्त करने और अपनी फसल कहीं भी बेचने की आजादी दिलाने के नाम पर लाया गया है। भूमंडलीकरण की शुरुआत से ही यह बात हवा में थी और शरद जोशी जैसे 'किसान नेता' इसकी वकालत करते थे। यह अलग बात है कि अपने प्रत्यक्ष अनुभव के बाद उनके शेतकारी संगठन के लोग भी अब इसके विरोधी हो गए थे।

इन क़ानूनों के बनने के मात्र पांच दिन बाद ही किसानों का जो देशव्यापी आंदोलन शुरू हुआ उसमें शेतकारी संगठन और उसके नेता विजय जावन्धिया अगुआ हैं। इससे ही निकले राजू शेट्टी

सरकार ने किसानों और राजनैतिक दलों के विरोध की तो नहीं ही परवाह की, अपने गठबंधन के सबसे पुराने और भरोसेमंद साथी, अकाली दल के विरोध को भी दरकिनार किया। फिर इसी कोरोना काल में पचास पाबंदियों के बीच बुलाए संसद के अधिवेशन में तीन विधेयक पास करके इन्हें कानूनी रूप दे दिया।

का संगठन तो और आक्रामक ढंग से विरोध कर रहा है। कृषि उत्पादों की खरीद और फसलों के समर्थन मूल्य से जुड़े बदलाव का दबाव अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं का रहा है लेकिन मनमोहन सिंह से लेकर अटलबिहारी वाजपेयी तक उस दबाव के आगे नहीं झुके थे। नरेन्द्र मोदी हुक्म बजाने को कर्तव्य ही नहीं मानते, बल्कि उसके लिए किसानों का सिर फोड़ने को तैयार हैं।

वैसे यह आन्दोलन और इसको देश भर में मिला समर्थन किसी भी शासक को डरा सकता था लेकिन सरकार ने जनता से पूरा ही मुँह फेर रखा है। जब अकाली दल ने नाता तोड़ा, उसकी मंत्री हरसिमरत कौर ने सरकार छोड़ा और संसद में हंगामा मचा तो सरकार की तरफ से यह बात प्रचारित होनी शुरू हुई कि न्यूनतम समर्थन मूल्य

की व्यवस्था और कृषि बाजार समितियों को बनाए रखा जाएगा। जब खुली बिक्री और माल एक फीसदी कर की व्यवस्था आ जाएगी तो फिर कौन किसान बाजार को छोड़कर सरकारी खरीद की तरफ जाएगा? जहां अभी भी कई छोटे छोटे टैक्स हैं। एक बार जब उधर अनाज आना कम होगा या बंद होगा तो व्यवस्था को भहराने में कोई वक्त नहीं लगेगा। जब सरकार की खुद की रुचि कम होगी या नहीं होगी तो फिर कौन न्यूनतम समर्थन मूल्य देगा और कौन इस व्यवस्था को चलाएगा जो काफी सारे किसानों के साथ पूरी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को टिकाए हुए है और हर समय हमें यह याद बल देती है कि हमारे गोदाम भरे हैं।

संभव है कुछ दिन न्यूनतम समर्थन मूल्य का नाटक चले पर वह सिर्फ नाटक ही होगा। जैसा इस बार भी हुआ कि रबी का समर्थन मूल्य भी खरीफ के सीजन में घोषित कर दिया गया। यह सही है कि अभी जो व्यवस्था है वह पंजाब और हरियाणा को छोड़कर बाकी कहीं ज्यादा प्रभावी नहीं है। करीब सत्तर फीसदी सरकारी खरीद इन्हीं दो राज्यों से होती है वरना बाकी देश के किसानों के लिए वह दूर की कौड़ी है तो सरकारी खरीद के दायरे में आने वाले किसानों के लिए भी

जब दो तिहाई से ज्यादा किसान एक हेक्टेयर से कम जमीन पर खेती करते हैं तो वे अपनी फसल को किस तरह बाहर यानि प्रदेश और देश से बाहर ले जाकर बेच पाएंगे यह सिर्फ नरेन्द्र मोदी और नरेन्द्र तोमर ही समझते होंगे। यह कदम तो छोटे किसानों को सरकारी व्यवस्था और संरक्षण से निकालकर बड़े कारपोरेट व्यापारियों और अंतरराष्ट्रीय आढतियों के जाल में झोंकने जैसा लगता है।

न्यूनतम मूल्य ही अधिकतम रहता है, लेकिन फैसला लेने के पहले सरकार ने बिहार के अनुभव से कोई सबक लिया नहीं। जहां चौदह साल से मंडी व्यवस्था खत्म है और किसान खुले बाजार में अनाज बेचते हैं। एक तो इतने बड़े राज्य में एक भी बाजार ढंग से नहीं विकसित हुआ है और दूसरे लगातार बिहार की कीमतें अन्य जगहों से कम रहती हैं। जब दो तिहाई से ज्यादा किसान एक हेक्टेयर से कम जमीन पर खेती करते हैं तो वे अपनी फसल को किस तरह बाहर यानि प्रदेश और देश से बाहर ले जाकर बेच पाएंगे यह सिर्फ नरेन्द्र मोदी और नरेन्द्र तोमर ही समझते होंगे। यह कदम तो छोटे किसानों को सरकारी व्यवस्था और संरक्षण से निकालकर बड़े कारपोरेट व्यापारियों और अंतरराष्ट्रीय आढतियों के जाल में झोंकने जैसा लगता है।

दूसरा कानून ऐसे फर्मों/आढतियों को सीजन में किसानों से अथाह अनाज/आलू प्याज/तेलहन/चीनी और दलहन खरीदने का और उनकी जमाखोरी करने की खुली छूट देगा। अभी तक जरूरी कृषि उत्पादों का स्टाक रखने की एक सीमा है, इसका व्यापार करने वालों के लिए और खाद्य पदार्थ बनाने वाली कम्पनियों के लिए भी। ब्रेड, बिस्कुट, जैम, केचप वगैरह बनाने वालों को उनके कारोबार और फ़ैक्टरी की क्षमता के हिसाब से ही स्टाक रखने का अधिकार रहता है। इसके बावजूद सीजन में दाम कम और किसान के हाथ से सामान निकलते ही महंगा होना रोज का अनुभव है।

अब पुराने समय के सेठों जैसे लोगों का जमाना वापस आता दिख रहा है जो पहले सारा तेलहन खरीदकर बैठ जाते थे और सीजन बीतने पर ऊंची कीमत वसूलना शुरू करते थे। बड़ी मुश्किल से धारा जैसा सहकारी ब्रांड जमा था। इधर उसे भी अडानी और आईटीसी जैसे बड़े समूहों के खाद्य तेलों ने पीछे धकेल दिया है। अब सरकार ऐसी देशी विदेशी कम्पनियों के लिए सारे कायदे स्थगित कर रही है। सो किसान तो मरेगा ही, आम उपभोक्ता भी पिसने वाला है या वह पाम

आयल जैसे सस्ते और खराब तेल की मिलावट झेलने को मजबूर होगा। कहना न होगा कि इसमें भी छोटे किसान और खेतिहर मजदूर ही सबसे ज्यादा मरेंगे क्योंकि उनकी क्रय शक्ति घटेगी और वे उत्पादक से ज्यादा उपभोक्ता हैं।

तीसरा कानून शायद सबसे ज्यादा नुकसानदेह और भारतीय खेती को बदलने वाला है। यह खेती की पैदावार की जगह पूरी खेती को ही कारपोरेट हाथों में सौंपेगा और किसान तथा खेतिहर मजदूर उनकी गुलामी के अलावा ज्यादा कुछ करने की स्थिति में नहीं होंगे। थोड़े से बयाना के आधार पर अपने खेतों में बड़ी खाद्य कम्पनियों के लिए खेती करने वाले किसान उनकी पसंद की फसलें उगाएंगे और जरा भी ऊपर नीचे होने पर अर्थात फसल खराब होने या क्वालिटी में कमी होने पर सीधे मरेंगे ही। अभी ही हम देखते हैं कि सीजन में टमाटर या आलू उगाने वालों का क्या हाल रहता है। कल को जब टमाटर, आलू, बन्द गोभी, शिमला मिर्च, सलाद का पत्ता, मांस, दूध, मक्खन, मक्का, तम्बाकू, अफीम और नील जैसी फसलें और उत्पादों का ठेका शुरू होगा तो देश के अलग-अलग इलाके 'बनाना रिपब्लिक' वाले अन्दाज में अलग-अलग रिपब्लिक बनेंगे। वे अलग-अलग कम्पनियों का अखाड़ा होंगे और आधा एकड़, पौन एकड़ के किस किसान की हिम्मत होगी जो उनके कांट्रैक्ट को चुनौती दे पाएगा?

दुनिया भर का यह अनुभव है कि उत्पाद की क्वालिटी पर सवाल लगाकर कम्पनियां माल नहीं खरीदतीं, उसके ज्यादा होने पर कम्पनियां अपना बयाना छोड़कर चल देती हैं और अपना सोलह आना दांव पर लगा चुके किसान के पास फांसी लगाने के अलावा कोई चारा नहीं होता क्योंकि वह इन कम्पनियों की भारी भरकम कानूनी टीम को चुनौती देने लायक वकील करने और अदालती लड़ाई लड़ने की स्थिति में नहीं होता। न ही उसे समझ आता है कि वह अपने टमाटर, बन्द गोभी, केले को कहां ले जाए, कहां क्या करे! उदारीकरण आने के बाद से ही अपने यहां लाखों किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

यह नया कानून किसानों और उपभोक्ताओं के साथ हमारी संघीय व्यवस्था को भी तहस नहस करने वाला है। एक तो खेती राज्य का विषय है। उससे जुड़े इतने व्यापक बदलाव वाले कानून केन्द्र कैसे ला सकता है। किसानों की नाराजगी और आन्दोलन के साथ यह सवाल भी राज्यों की तरफ से उठने लगा है। केन्द्र सरकार इस विषय को 'खाद्य' का और समवर्ती सूची का बताकर दखल दे रही है। इस कानून के बाद राज्यों में अनाज खरीद और संरक्षण के काम में लगे लोगों की बेरोजगारी का सवाल है और यह संख्या कम नहीं है।

तीसरा मसला राज्यों के राजस्व में आने वाली कमी का है। वे फसल की बिक्री पर एक छोटा कर लेते थे, उप कर वसूलते थे। पंजाब में धान, गेहूं की बिक्री पर यह कर छह फीसदी था और आढतियों का हिस्सा ढाई फीसदी का। अब भले एक फीसदी कर की बात कही जा रही है लेकिन रेट, कमीशन और खुले बाजार के दलाल रेगुलेटेड रेट पर काम नहीं करेंगे यह तय है। जीएसटी में लिखत पढ़त के वायदे के बावजूद केन्द्र राज्यों का कई लाख करोड़ रुपया लेकर बैठ चुका है और उन्हें रिजर्व बैंक से कर्ज लेने को कह रहा है। जाहिर है कि किसान को लागत की दो गुनी कीमत की तरह कोआपरेटिव फेडरलिज्म भी दिखाने का दांत बनकर रहेगा लेकिन ये सब छोटे मसले हैं। किसान, खेती, अनाज के व्यापार और आम उपभोक्ता को जिस तरह एक झटके में और बीच कोरोनाकाल में बिना वोटिंग के पास बिल के सहारे बाजार के हवाले कर दिया गया है वह सिर्फ राजनैतिक दुराचार, पूंजीपतियों की बेशर्म दलाली और किसी एक शासक की सनक का मसला नहीं है। यह देश के करोड़ों लोगों के जीवन मरण का सवाल है।

(यह लेखक के अपने विचार हैं)

नए कृषि कानूनों के खिलाफ समाजवादी पार्टी ने सड़क पर उतरकर मुखर विरोध शुरू कर दिया है। राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अखिलेश यादव जी के निर्देश पर पार्टी ने उत्तर प्रदेश के सभी जिलों में विरोध प्रदर्शन किया।

मज़दूर बचाओ
लोकतंत्र बचाओ

मज़दूर बचाओ
लोकतंत्र बचाओ

कार्यालय जिलाधिकारी / जिला मजिस्ट्रेट सोनभद्र

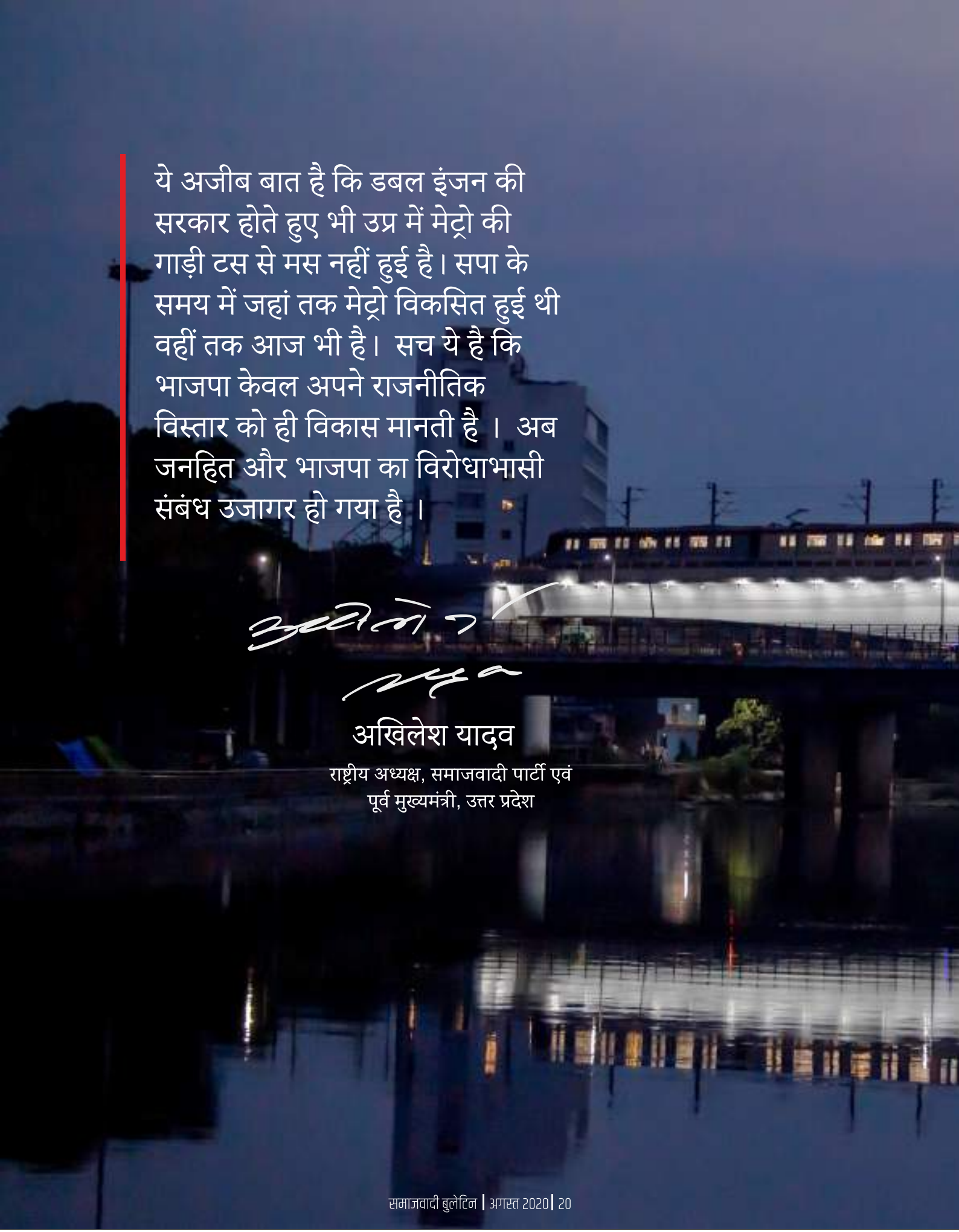

ये अजीब बात है कि डबल इंजन की सरकार होते हुए भी उप्र में मेट्रो की गाड़ी टस से मस नहीं हुई है। सपा के समय में जहां तक मेट्रो विकसित हुई थी वहीं तक आज भी है। सच ये है कि भाजपा केवल अपने राजनीतिक विस्तार को ही विकास मानती है । अब जनहित और भाजपा का विरोधाभासी संबंध उजागर हो गया है ।

अखिलेश यादव

राष्ट्रीय अध्यक्ष, समाजवादी पार्टी एवं
पूर्व मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश

#काम बोलता है

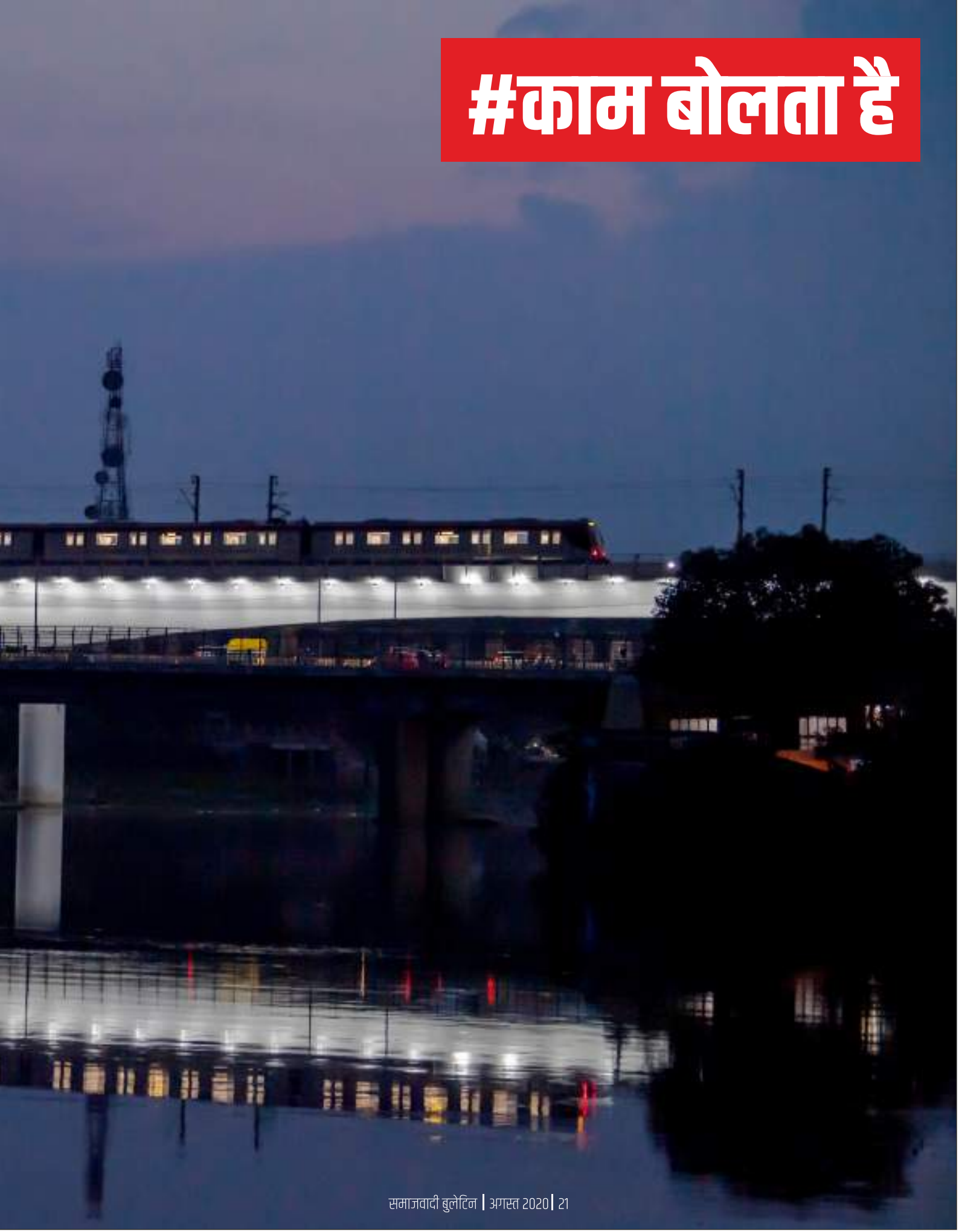

किसानों को गुलाम बना रही भाजपा

- अखिलेश जी

बुलेटिन ब्यूरो

समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं पूर्व मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव ने कहा है कि केन्द्र और प्रदेश की भाजपा सरकार की नीतियां किसान और नौजवान विरोधी है। भाजपा सरकार किसानों को बर्बाद करने पर तुली है। यह सरकार खेती को अमीरों के हाथों गिरवी करने के लिए शोषणकारी कानून लायी है।

यह खेतों से किसानों का मालिकाना हक छीनने का षडयंत्र है। इससे एमएसपी सुनिश्चित करने वाली मंडियां धीरे-धीरे खत्म हो जाएंगी। भविष्य में किसानों की उपज का उचित दाम भी छिन जाएगा और वो अपनी ही जमीन पर मजदूर बन कर रह जाएगा। भाजपा सरकार सन् 2014 से ही किसानों की उपेक्षा करती आई है। भूमि अधिग्रहण के प्रयास के बाद अब भाजपा कृषि कानूनों के जरिए किसानों को बड़े व्यापारियों का मोहताज बनाना चाहती है। किसान की उपज को

नए कानून के सहारे बड़ी कम्पनियां और बड़े व्यापारी मनमाने ढंग से खरीदेंगे।

अखिलेश जी ने कहा है कि भाजपा की छल प्रपंच और झूठ की रीतिनीति ने राजनीतिक शुचिता और लोकतंत्र पर गहरा आघात किया है। किसानों के हितों पर चोट करने और उनकी किस्मत कारपोरेट घरानों को सौंपने में उसे जरा भी हिचक नहीं होती है। भाजपा नए कृषि कानूनों को किसानों की आजादी के जुमले का नाम देकर वास्तव में किसानों को गुलाम बनाना चाहती है। केन्द्र सरकार द्वारा लाया गया कानून किसान विरोधी है, यह किसानों के साथ बड़ी साजिश है।

श्री अखिलेश यादव ने कहा है कि कृषि और किसान ही होता है जो कठिन समय में देश की अर्थव्यवस्था सम्हालता था। लेकिन अब खेती पर बड़े उद्योगपतियों की नजर है। जिससे किसान मजदूर बन कर रह जाएगा। किसानों की खेती बर्बाद हो जाएगी। राज्यसभा में कृषि विधेयकों को विपक्ष की बातों को अनसुना कर पास घोषित करा लिया गया। जब संसद के अंदर और बाहर इस पर कड़ी प्रतिक्रिया होते दिखाई दी तो बहकाने-भटकाने की अपनी शैली में भाजपा सरकार ने रबी की फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य तत्काल घोषित कर दिए जबकि हमेशा अक्टूबर के तीसरे हफ्ते में ऐसे निर्णय सामने आते थे। एक माह पहले रबी की फसल के समर्थन मूल्य घोषित करके किसानों को ठगने की यह कोशिश कामयाब नहीं होने वाली है।

अखिलेश जी ने कहा है कि सच तो यह है कि लम्बे संघर्ष के बाद किसानों को आजादी मिली थी, लेकिन कांट्रैक्ट खेती से देर सबेर किसान फिर पुरानी हालत में लौट जाएगा, अपनी ही जमीन पर मजदूर हो जाएगा। कृषि उत्पादन मण्डी समाप्त होने से किसान अपनी फसल औनेपौने दाम पर बेचने को विवश होगा। किसान को न्यूनतम समर्थन मूल्य जब अभी भी नहीं मिल पा रहा है तो खुले बाजार में उसकी मोल तोल की ताकत कहां होगी? बड़े आढ़तियों, बड़ी कम्पनियों के सामने किसान के लिए क्या विकल्प होगा? किसान को न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलना मुश्किल होगा। सरकार ने अपने विधेयकों में इसकी व्यवस्था न रखकर सिर्फ वादे से आश्वस्त करना चाहा पर यह तो किसान को भटकाने की बात है।

श्री अखिलेश यादव ने कहा कि किसान को लागत से ड्योढ़ी कीमत देने और आय दुगनी करने तथा सभी कर्जे माफ करने के भाजपा के

वादे हवा में ही रह गए है, तो उनके किसान हित के वादों का भरोसा कौन करेगा? भाजपा सब कुछ निजी क्षेत्र को सौंपने में लगी है, उसके लिए जनसामान्य की जिंदगी का कोई मोल नहीं है। वह तो जनधन के शोषक पूंजीघरानों को ही बढ़ाने, उनके हाथों में राष्ट्रीय सम्पत्ति सौंपने को बेकरार दिखाई देती है।

उत्तर प्रदेश में भाजपा राज में किसानों की जितनी बर्बादी हुई है और उन्हें अपमानित किया गया है उतना पहले कभी नहीं हुआ। राज्य का किसान भाजपा राज में आपदा और अभाव से अभिशप्त है। खरीफ की फसल के लिए किसानों को जरूरत भर यूरिया तक नहीं मिला। यूरिया के नाम पर भारी कालाबाजारी चली।किसान अन्नदाता है लेकिन भाजपा उसकी हितों की चिंता से बेपरवाह है। वह तो कारपोरेट की संरक्षक पार्टी है। किसानों की मौत पर भी उसकी संवेदना नहीं जागती है। कृषि अर्थव्यवस्था को भाजपा ने चैपट कर दिया है। अब किसानों ने अपनी आय दोगुना करने का झांसा देनेवालों से बदला लेने के लिए सन् 2022 ही निश्चित कर रखा है।

मोदी राज में सार्वजनिक क्षेत्र का हाल

बेच दो !

रवीन्द्र नाथ सिन्हा

वरिष्ठ पत्रकार

आजादी के बाद पहली बार ऐसे हालत सामने आये हैं जब केंद्र की सरपरस्ती वाले सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को एक ऐसी केंद्र सरकार के साथ संघर्ष करना पड़ रहा है, जो न सिर्फ उन्हें नापसंद करती है बल्कि उनसे पल्ला भी झाड़ना चाहती है। दूसरा कोई प्रधानमंत्री इन सार्वजनिक उद्यमों के इतना खिलाफ नहीं रहा जितना कि नरेंद्रभाई दामोदरदास मोदी हैं। खास तौर पर अपने दूसरे कार्यकाल में।

सरकार की बेरहमी और संवेदनहीनता का अंदाज़ा इस बात से हो जाता है जब 31 जनवरी 2020 को काम पूरा होने के बाद भारत संचार निगम लिमिटेड के 78,000 से अधिक कर्मचारियों और महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड के 14,000 कर्मचारियों के नाम स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के तहत उपस्थिति रजिस्टर से हटा दिए गए। वास्तव में इस योजना के तहत अधिकारियों द्वारा संचार मंत्री रविशंकर प्रसाद के निर्देश पर इसे मानने के लिए दबाव डाला गया।

केंद्र ने यह सुनिश्चित करने के लिए कि वीआरएस का विकल्प लेने वालों के स्थान पर नियुक्ति की कोई गुंजाइश नहीं है, एक झटके में सभी 92,000 पदों को ख़त्म कर दिया। यह स्वतंत्र भारत में एक सरकार का अपने कर्मचारियों के खिलाफ सबसे बेरहम कदम था। यहां उल्लेखनीय है कि दो वर्षों से केंद्र अपने निजी क्षेत्र के प्रतिस्पर्धियों को 5 जी स्पेक्ट्रम के लिए तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए बीएसएनएल 4 जी स्पेक्ट्रम को आवंटित नहीं कर रहा था।

मोदी और उनके मंत्रियों, खासकर उनकी वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण और पेट्रोलियम मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ये दलील देते हैं कि "कारोबार देखना सरकार का कारोबार नहीं।" तो अब क्या किया जाना चाहिए ? ऐसे में ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म OLX की मुहिम के दो शब्दों पर अमल किया जाता है। इन दो शब्दों की मुहिम क्या थी : "बेच दे"।

मोदी और उनके मंत्रियों को यह जानना चाहिए कि कैसे, स्वतंत्रता के बाद देश की सत्ता संभालने वालों को यह पता लगाना पड़ा था कि देश की प्राथमिकताएं क्या हैं व क्यों औद्योगिक आधार को प्राथमिकता दी जानी थी। बुनियादी तौर पर भारत एक कृषि

आधारित अर्थव्यवस्था था, जिसका औद्योगिक आधार बेहद कमज़ोर था। अब तक की योजनाओं में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उद्योगों में बड़े निवेश के साथ उद्योगों की स्थापना को प्राथमिकता दी गई थी, अर्थव्यवस्था को मज़बूत करने के लिए आयात में कटौती, रोजगार के अवसर बढ़ाने की योजना थी। यह योजना नियोजित अर्थव्यवस्था का हिस्सा थी जिसे विचार करके और सुझावों के आधार पर तैयार किया गया था। इस तरह एक औद्योगिक नीति आकार में आई और योजना आयोग की निगरानी में चरणबद्ध तरीके से एक योजना आयोग का गठन हुआ, जो अस्तित्व में आई। (यह वही संस्था है जिसे मोदी ने मई 2014 में प्रधानमंत्री बनने के तुरंत बाद राज्य सरकारों के

सीपीएसई की स्थापना की प्रक्रिया में धीरे-धीरे तेजी आई और इनकी संख्या बढ़कर लगभग 240 तक पहुंच गई और उन्होंने कई क्षेत्रों में अपनी हाज़िरी दर्ज कराई। उन्होंने न केवल रोजगार के अवसर उत्पन्न किए, बल्कि लोगों के पिछड़े वर्गों के लिए तैयार की गई आरक्षण नीतियों को लागू करने के लिए सरकार के लिए महत्वपूर्ण जरिया बने।

परामर्श के बिना समाप्त कर दिया था।)

इन प्रबुद्ध राजनेताओं ने जब दक्ष और योग्य नौकरशाहों की टीम के साथ काम संभाला तो इस नज़रिये की तरफ रुख मोड़ना चाहा कि एक ऐसे भारी निवेश की ज़रूरत है जो निजी क्षेत्र के उद्योगपतियों की सीमित संख्या की क्षमता के बस की बात नहीं है। एक मज़बूत सार्वजनिक क्षेत्र के लिए मुल्क के इस औद्योगीकरण के नाम पर सरकार ने एक प्रमोटर की भूमिका निभाई। इन ओहदेदार राजनेताओं ने कभी भी निजी क्षेत्र की भूमिका को छोटा करके नहीं आंका और इनकी चाहत रही कि दोनों सेक्टर एक ऐसी अर्थव्यस्थता का आधार बनें जो एक दूसरे की पूरक हों।

सीपीएसई की स्थापना की प्रक्रिया में धीरे-धीरे तेजी आई और इनकी संख्या बढ़कर लगभग 240 तक पहुंच गई और उन्होंने कई क्षेत्रों में अपनी हाज़िरी दर्ज कराई। उन्होंने न केवल रोजगार के अवसर उत्पन्न किए, बल्कि लोगों के पिछड़े वर्गों के लिए तैयार की गई आरक्षण नीतियों को लागू करने के लिए सरकार के लिए महत्वपूर्ण जरिया बने। निजी क्षेत्र की कंपनियां कम से कम आरक्षण नीतियों अपनाना चाहती थीं। विकास में क्षेत्रीय असंतुलन को सही करने के

लिए सीपीएसई जरिया बना। उन औपचारिक वर्षों में और उसके बाद भी निवेश के मामले में पिछड़े उत्तर-पूर्व में निजी क्षेत्र की किसी तरह की भागीदारी नहीं रही। लेकिन उन दिनों आर्थिक विकास कार्यक्रमों के लिए उत्तर-पूर्व को भी ध्यान में रखना था और साथ ही क्षेत्र के सामरिक महत्व को देखते हुए उत्तर-पूर्व के लिए विशेष योजनाओं को तैयार करना था।

संयुक्त राज्य अमेरिका के टेनेसी वैली अथॉरिटी के मॉडल पर बहुउद्देशीय दामोदर वैली कॉर्पोरेशन की स्थापना, हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन, राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर और बाद में बोकारो, दुर्गापुर में मिश्र धातु इस्पात संयंत्र (जिसने कुछ ही वर्षों में परमाणु-ग्रेड मिश्र धातु इस्पात विकसित करना शुरू कर दिया), रक्षा उपयोगों के लिए मिश्र धातु निगम लिमिटेड, भाखड़ा नांगल डैम कुछ उदाहरण हैं जो उन दिनों के राजनीतिक जानकारों की सोच व योजनाकारों और नौकरशाहों द्वारा की गई मेहनत पर रौशनी डालते हैं।

उस दौर की ज़रूरत के मुताबिक़ वाणिज्यिक बैंकों का बड़ी संख्या में किया जाने वाला राष्ट्रीयकरण और 1970 के दशक में कोयला क्षेत्र का राष्ट्रीयकरण, जैसे किये जाने वाले विकास कार्य ही देश में असमानताओं को घटाने और व्यापक गरीबी से निपटने के जवाब थे। इसके लिए सीपीएसई को कार्यक्रम के कल्याण घटक को लागू करने की खासी जिम्मेदारी सौंपी गई थी।

1948 और 1956 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव के पारित होने से, जिसमें राज्य की भूमिका पर काफी हद तक जोर दिया गया, सीपीएसई की सार्वजनिक क्षेत्र की रणनीतियों की रूपरेखा 1973, 1977, 1980 और अंत में 1991 के नीतिगत चरणों में भी जारी की गई, जो जल वर्ष और उदारीकरण के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था में अपना एक मुकाम दर्ज करने वाला दौर साबित हुआ। लाइसेंसिंग प्रावधान को भी सुविधाजनक बनाया गया, सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सुरक्षा को व्यावहारिक रूप से ख़त्म कर दिया गया, ये वो समय था जब सीपीएसई को बाजार की ताक़तों के आगे

केंद्र सरकार बड़ी संख्या में सीपीएसई का निजीकरण करना चाहती है और इन कर्मचारियों को अनिश्चित भविष्य की ओर उस समय में ढकेल रही है जब बेरोजगारी का ग्राफ पिछले 45 सालों में सबसे ज़्यादा ऊँचाई पर है और अर्थव्यवस्था डगमगा रही है।

मोर्चा संभालने की ज़रूरत थी। ऐसे में निजी क्षेत्र की भूमिका के विस्तार के अलावा
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का भी प्रावधान किया गया। चयनित सीपीएसई की इक्विटी के विनिवेश के लिए एक महत्वपूर्ण शुरुआत की गई थी। इस तरह से चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों को देखते हुए सीपीएसई को इन हालात के तहत काम करने लायक बनाने की ज़रूरत थी।

उसके बाद से श्रमिकों को उनके वैध बकाया और मुआवजे के भुगतान के बाद उन कमज़ोर सीपीएसई को बंद कर दिया गया या बेच दिया गया जिनके दोबारा अमल में आने की गुंजाईश नहीं बची थी। कई सीपीएसई मसलन विदेश संचार निगम लिमिटेड, भारतीय पेट्रोकेमिकल्स कॉर्पोरेशन लिमिटेड, मारुति उद्योग लिमिटेड और सीएमसी लिमिटेड का उदारीकरण की भावना के मद्देनज़र रणनीतिक विचारों के तहत निजीकरण किया गया।

यह हक़ीक़त है कि कई सीपीएसई जिनमे एकीकृत स्टील प्लांट, दुर्गापुर स्टील प्लांट और निश्चित रूप से, राष्ट्रीयकृत बैंकिंग क्षेत्र का नाम लिया जा सकता है, इन्हे अपने विभागीय 'अवतार' की बदौलत अपनी मांगों के समर्थन में ट्रेड यूनियनों के सहारे सख्त आंदोलन का सामना करना पड़ा, जिसमें बीएसएनएल भी शामिल है। कुछ मामलों में ये आंदोलन इतने लंबे समय तक जारी रहा जिसके नतीजे में लोगों को कई दिनों का नुकसान हुआ। ऐसा शायद ट्रेड यूनियनों की कार्रवाई उचित तरीके से न हो पाने के कारण हुआ। प्रबंधन की विफलता भी इसकी एक वजह हो सकती थी। अक्षमता के भी उदाहरण सामने आए लेकिन कभी भी मोदी सरकार के कार्यकाल से पहले सार्वजनिक क्षेत्र की अवधारणा को त्यागने और सीपीएसई के बड़े पैमाने पर निजीकरण की नौबत नहीं आई।

क्या मोदी और उनके मंत्रियों को पता है कि महाराष्ट्र, गुजरात और अन्य राज्यों में लगभग 130 निजी स्वामित्व वाली कपड़ा मिलें वर्षों पहले बदहाली के कारण ख़त्म होने की कगार पर थीं और केंद्र ने उनका राष्ट्रीयकरण करने के साथ उन्हें राष्ट्रीय कपड़ा निगम के तहत संचालित किया था? इसका कारण पता है क्या था? बेशक, उत्पादन जारी रखना और हजारों

श्रमिकों के रोजगार को बचाना। क्या मोदी व निर्मला सीतारमण को इस बात की खबर है कि कोल इंडिया लिमिटेड के शुरुआती 10 वर्षों के प्रस्ताव को निवेशकों की भारी प्रतिक्रिया मिली थी?

केंद्र सरकार बड़ी संख्या में सीपीएसई का निजीकरण करना चाहती है और इन कर्मचारियों को अनिश्चित भविष्य की ओर उस समय में ढकेल रही है जब बेरोजगारी का ग्राफ पिछले 45 सालों में सबसे ज़्यादा ऊँचाई पर है और अर्थव्यवस्था डगमगा रही है। इसमें कोई शक नहीं है, महामारी ने इस मंदी में बड़ा योगदान दिया है, जो कोविड -19 के आने से पहले ही एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या के रूप में उजागर हो गया था। बड़े पैमाने पर इस बात का भी शक है कि मोदी मंदी से बचाव के नाम पर इस खरीद फरोख्त की अहमियत को बढ़ावा देना चाहते हैं। उन्हें लोगों को इस बात का जवाब देना चाहिए कि गुजरात में 12 साल से अधिक के अपने मुख्यमंत्रित्व काल में उन्होंने सरकार के स्वामित्व वाले सार्वजनिक उपक्रमों के निजीकरण का काम क्यों नहीं किया।

मौजूदा स्थिति में मैं ऐसे हालिया मुद्दों का हवाला देना चाहूंगा जो मेरी नज़र में प्रासंगिक हैं, मसलन बीएसएनएल-एमटीएनएल और पूर्ववर्ती योजना आयोग का अचानक उन्मूलन कुछ ऐसे ही उदहारण हैं।

उत्तर कन्नड़ लोकसभा से कारवार निर्वाचन क्षेत्र के प्रतिनिधि अनंत कुमार हेगड़े ने हाल में अपनी पार्टी की सभा को संबोधित करते हुए बीएसएनएल कर्मचारियों को "देशद्रोही" कहा और सुझाव दिया कि उन्हें बहाल नहीं करना चाहिए। अपनी जहरीली, तर्कहीन टिप्पणी के लिए पहचाने जाने वाले हेगड़े इस बहाने किसे उकसाने की कोशिश कर रहे थे? ये सच है कि बीएसएनएल की खराब सेवाओं को लेकर ढेरों शिकायतें थीं। इसे ठीक करने की मांग भी जायज है, मगर सांसद बीएसएनएल के सभी कर्मचारियों को 'देशद्रोही' कैसे कह सकते हैं।

क्या उन्हें इस इस बात का एहसास है कि बीएसएनएल और उसके पिछले विभागीय 'अवतार' पारंपरिक रूप से रक्षा क्षेत्र और रणनीतिक रूप से बेहद संवेदनशील समझे जाने वाले उत्तर-पूर्वी क्षेत्र की सेवा के लिए तत्पर रहे हैं? मोदी शासन के रवैये को जानते हुए और सीपीएसई के अलावा खासकर बीएसएनएल-एमटीएनएल को देखते हुए हेगड़े ने ये कहने की हिम्मत जुटाई है। क्या मोदी की सहजता इसलिए है क्योंकि वो जानते हैं कि "जिओ है ना"?

उनके शासन की शुरुआत पर पूर्ववर्ती योजनाओं के अचानक उन्मूलन, नोटबंदी का फैसला और आधी अधूरी जीएसटी की शुरूआत ने उनके खामियों भरे रास्ते को ज़ाहिर कर दिया था। दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश ए पी शाह द्वारा दिया गया खिताब "निर्वाचित निरंकुशता" इसका एक बेहतरीन उदाहरण हैं। दिल्ली में बीते दिनों एक वेबिनार को संबोधित करते हुए न्यायमूर्ति शाह ने आशंका व्यक्त की थी कि शायद भारत एक "निर्वाचित निरंकुशता के एक रूप की ओर बढ़ रहा है"।

(यह लेखक के अपने विचार हैं)

लेख के लिए संदर्भ:

सार्वजनिक उद्यम विभाग अध्ययन, भाग 1,
भारत में सार्वजनिक क्षेत्र- सिंहावलोन व

निजीकरण यानी सरकारी नौकरियां खत्म!

रोजगार की गारंटी नहीं है एनआरए

प्रेम कुमार

पत्रकार, लेखक

बेरोजगारों के 'अच्छे दिन' की उम्मीद ढलती उम्र के साथ दम तोड़ती जाती है। रोज़गार समाचार में रोज़गार की मृग मरीचिका के पीछे भागते बेरोजगार कभी सोच भी नहीं पाते कि वे प्रतियोगी परीक्षाओं में पास होने की स्पर्धा करते हैं या कि फेल होने की। तकरीबन वही चेहरे हर दूसरे-तीसरे एक्जाम में टकरा जाया करते हैं। उनमें गुफ्तगू चंद उन सफल छात्रों के बारे होती है जो उनके बीच से सफल होकर 'निकल' गये होते हैं। सरकारी या अर्ध सरकारी नौकरी की हसरत हार जाने के बाद उनके पास विकल्प के तौर पर 'पकौड़े वाला रोजगार' ही रह जाता है। यही होनहारों की नियति बन चुकी है। क्या नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी प्रतियोगी छात्रों को इस हश्र से उबारने जा रहा है? क्या एनआरए के बन जाने से नौकरियां बढ़ने वाली हैं?

मेडिकल और इंजीनियरिंग से लेकर बैंकिंग एक्जाम में कॉमन टेस्ट की परंपरा तो पहले से है। अब बाकी हिस्से भी एनआरए की छतरी के नीचे चले आएंगे। शायद आने वाले समय में यूपीएससी, एसएससी, रेलवे रिक्रूटमेंट बोर्ड, आईबीपीएस रिक्रूटमेंट जैसी अलग-अलग संस्थानों की जरूरत न रह जाए। जाहिर है बेरोजगारी यहां भी पैदा होगी। मगर, रोज़गार कहां पैदा हो रहे हैं? नौकरियां पहले भी कम थीं। अब और कम हो गयी हैं। प्रति नौकरी आवेदकों की संख्या लगातार बढ़ी है। वर्तमान में हर साल ढाई करोड़ आवेदक नौकरी मांगते हैं। सिर्फ एसएससी में 2018-2019 में 70 लाख आवेदक थे।

लगातार घट रही हैं नौकरियां

सरकारी नौकरियां लगातार घट रही हैं। चाहे वह केंद्रीय सेवा हो या फिर राज्यस्तरीय सेवा या फिर दुनिया में सबसे ज्यादा रोजगार देने का रुतबा रखने वाला रेलवे ही क्यों न हो। देश की जनसंख्या बढ़ रही है लेकिन कर्मचारी घट रहे हैं। यह भी आश्चर्य की बात है कि मोदी सरकार में केंद्रीय कर्मचारियों के लिए स्वीकृत पद तो बढ़े, लेकिन उस हिसाब से रिक्तियां नहीं हुईं। नवंबर

2019 में संसद में केंद्र सरकार की ओर से दी गयी जानकारी के मुताबिक 2014 में स्वीकृत पदों की संख्या 36.45 लाख थी जो 2019 में बढ़कर 38.02 लाख हो गयी। इस तरह 1.57 लाख स्वीकृत पद बढ़ गये। हालांकि 2019 तक 31 लाख 18 हजार कर्मचारी थे। इसका मतलब यह है कि करीब 7 लाख पद नहीं भरे गये। देश में कुल सरकारी कर्मचारियों की संख्या के मुकाबले केंद्रीय कर्मचारी महज 14 प्रतिशत हैं। बाकी कर्मचारियों राज्य सरकारों में सेवारत हैं। देश में सशस्त्र सैन्य बल समेत 48.6 लाख केंद्रीय कर्मचारी हैं।

31 मार्च 2014 में सार्वजनिक उपक्रमों में काम करने वाले श्रमिकों की तादाद थी 9.5 लाख। इसी साल नरेंद्र मोदी की सरकार दो करोड़ सालाना नौकरी देने का वादा करते हुए सत्ता में आयी थी। चार साल बाद 2018 में सार्वजनिक उपक्रमों में श्रमिकों की तादाद रह गयी 7.1 लाख। इस दौरान 24,289 प्रबंधकीय अधिकारियों-कर्मचारियों की भी नौकरी गयी। मतलब ये कि महज चार साल में ही 2.6 लाख श्रमिकों की नौकरियां चली गयीं। मतलब ये कि 27.3 प्रतिशत नौकरी सिर्फ चार साल में चली गयी।

एक बात और महत्वपूर्ण है कि जहां सार्वजनिक उपक्रमों में स्थायी नौकरी घट रही है, वहीं ठेके पर काम करने वालों की तादाद बढ़ती चली गयी है। 2014 में ऐसे श्रमिकों की हिस्सेदारी कुल श्रम बल में 36 फीसदी थी, जो 2018 में 53 फीसदी हो गयी। प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों हो रहा है कि ठेके पर काम करने वालों की संख्या बढ़ रही है और स्थायी श्रमिकों की संख्या घट रही है?

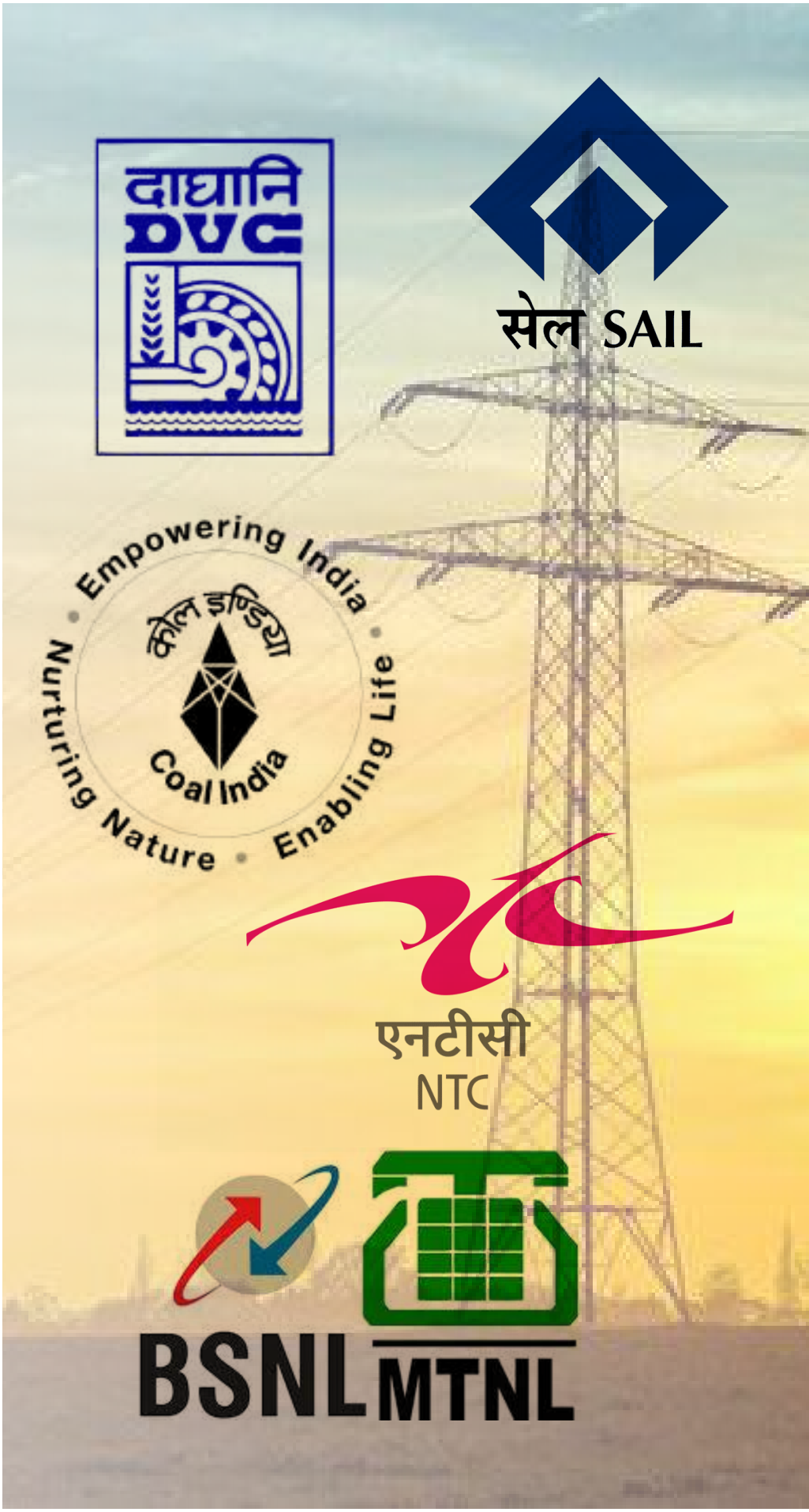

विनिवेश-निजीकरण से बढ़ रही है नौकरी की समस्या

उपरोक्त सवाल का उत्तर केंद्र सरकार की विनिवेश नीति देती है। इस नीति के तहत सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों में निजी क्षेत्र की भागीदारी लगातार बढ़ायी जा रही है। ऐसा पीएसयू के शेयर बेचकर किया जा रहा है। 1991 में जब उदारीकरण शुरू हुआ तब से यह विनिवेश सरकारी नीति का हिस्सा बन गयी। बाद की सरकारों ने अर्थव्यवस्था को सुधारने के नाम पर विनिवेश को एक अचूक अस्त्र की तरह इस्तेमाल किया। कांग्रेस और बीजेपी की सरकारों में एक किस्म की स्पर्धा रही जिसमें बीजेपी की सरकार बहुत आगे निकल गयी। नीचे के आंकड़ों पर गौर करें तो यह बात आपको स्पष्ट समझ में आ जाएगी।

साल दर साल विनिवेश

अवधि	विनिवेश
1999-2004	24,620 करोड़
2004-2009	8,516 करोड़
2009-2014	1,05,529 करोड़
2014-2019	2,80,490 करोड़

1991 के बाद से अगर विनिवेश से सरकार को कुल प्राप्ति को देखें तो वह रकम होती है 4.5 लाख करोड़ रुपये। इनमें से बीजेपी सरकार में 4,16,297 करोड़ की रकम (1998-99 में वाजपेयी सरकार में 5,658 करोड़ का विनिवेश हुआ था।)सार्वजनिक उपक्रमों के विनिवेश से हासिल की गयी। प्रतिशत रूप में यह 91 प्रतिशत से भी ज्यादा होता है। वास्तव में विनिवेश की प्रक्रिया को मंत्रालय बनाकर संस्थागत रूप वाजपेयी की सरकार ने ही दिया था।

2018 में सार्वजनिक उपक्रमों में श्रमिकों की तादाद रह गयी 7.1 लाख। इस दौरान 24,289 प्रबंधकीय अधिकारियों-कर्मचारियों की भी नौकरी गयी। मतलब ये कि महज चार साल में ही 2.6 लाख श्रमिकों की नौकरियां चली गयीं।

वर्तमान नरेंद्र मोदी की सरकार ने सिर्फ चालू वर्ष में विनिवेश से आय की प्राप्ति का लक्ष्य 2.1 लाख करोड़ रखा है। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के शेयर बेच कर यह रकम इकट्ठा की जाएगी। इनमें एलआईसी और आईडीबीआई के शेयरों को बेचने की योजना भी शामिल है। बोलचाल की भाषा में कहें तो संपत्ति बेचकर यह रकम इकट्ठा होगी। आखिर इस रकम का क्या होगा? सरकार इस रकम का इस्तेमाल राजस्व घाटा को सम्भालने में करेगी। अगर, आप भूले नहीं हैं तो आरबीआई से ली गयी 1.86 लाख करोड़ की रकम भी राजस्व घाटे के पेट में चली गयी। सच तो यह है कि इस बारे में पत्रकारों के सवाल पर खुद वित्तमंत्री निर्मला सीतारमन ने कहा था कि उन्हें अभी पता नहीं

स्थायी के बजाए ठेके वाले रोजगार

एक तरफ विनिवेश के जरिए सार्वजनिक उपक्रमों का निजीकरण हो रहा है, वहीं लोगों के रोजगार घट रहे हैं। ऐसा नहीं है कि रोजगार नहीं हैं। रोजगार हैं लेकिन उसे अस्थायी और ठेके वाले रोजगार में बदल दिया जा रहा है। निजीकरण रेलवे में भी चल रहा है। स्थायी नौकरी को अस्थायी नौकरी में कैसे बदला जा रहा है उसका उदाहरण है प्रधानमंत्री गरीब कल्याण रोजगार अभियान। 20 जून 2019 को यह अभियान शुरू हुआ। 21 अगस्त तक 12,276 लोगों को काम मिला है। यह अभियान 125 दिन तक देश के 116 जिलों में चलना है। सवाल यह है कि क्या यह रोज़गार का विकल्प है?

2016-17 में रेलवे में 13 लाख डी ग्रुप के कर्मचारी थे। 2019 में रेलवे में कुल कर्मचारियों की संक्या 12.27 लाख कर्मचारी रह गयी और अब यह 12.18 लाख है। रेलवे में हर साल 50 हजार से ज्यादा कर्मचारी रिटायर कर रहे हैं। उस हिसाब से नियुक्तियां बहुत कम हैं। 2014 से 2017 के दौरान चार साल में 2.32 लाख लोग रिटायर हुए हैं जबकि नियुक्ति महज 94, 578 लोगों की हुई। जाहिर है 1 लाख 38 हजार 163 कर्मचारी तो महज चार साल में घट गये।

रेलवे : हर साल 50 हजार से ज्यादा हो रहे हैं रिटायर, नियुक्ति सुस्त

वर्ष	रिटायर	नियुक्ति
2014	60,754	31,805
2015	59,960	15,191
2016	53,654	27,995

40 दिन, 69 लाख आवेदन, नौकरी केवल 7700 को!

40 दिन और नौकरी के लिए 69 लाख आवेदन और, नौकरी महज 7700 लोगों को। आत्मनिर्भर स्किल्ड इम्पलॉय इम्पलॉयर मैपिंग यानी ASEEM पोर्टल- जिसे प्रधानमंत्री ने 11 जुलाई को लांच किया था, इसका यही आउटकम यानी कि नतीजा है। पोर्टल लांच करने मकसद था लॉकडाउन के बाद नौकरियां गंवा चुके लोगों की मदद करना। मदद मांगने तो लाखों पहुंचे, मगर नौकरी ऐसे मिली जैसे 'ऊंट के मुंह में जीरा' की कहावत चरितार्थ हो गयी हो।

देश के 116 जिलों में प्रधानमंत्री की ओर से शुरू की गयी गरीब कल्याण रोजगार अभियान के तहत इस पोर्टल की लांचिंग से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण बातों पर गौर करते हैं-

40 दिन में 69 लाख लोगों ने ASEEM पोर्टल पर नौकरी के लिए खुद को रजिस्टर कराया।

1.49 लाख श्रमिकों को नौकरी का ऑफर गया, मगर नौकरी मिली सिर्फ 7700 लोगों को।

नौकरी खोजने वालों में महिलाओं की हिस्सेदारी महज 5.4%

ASEEM पोर्टल पर 514 कंपनियां रजिस्टर हुईं।

443 कंपनियों ने 2.92 लाख नौकरियां ऑफर कीं।

वास्तव में 1.49 लाख नौकरियों के ऑफर आवेदकों को भेजे गये।

पंजीकृत 42.3 प्रतिशत लोग उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा, तमिलनाडु और दिल्ली से हैं।

पोर्टल पर नौकरियों का 77 फीसदी ऑफर पांच राज्यों से- कर्नाटक, दिल्ली, हरियाणा, तेलंगाना और तमिलनाडु

लॉजिस्टिक्स, हेल्थकेयर, बैंकिंग, फिनान्शियल सर्विसेज़ और इन्श्योरेंस, रीटेल और कंस्ट्रक्शन से सबसे ज्यादा 73.4 फीसदी नौकरियां पोर्टल पर हैं।

रोजगार के लिए रजिस्टर कराने वालों में केवल प्रवासी मजदूर नहीं हैं। टेलर, इलेक्ट्रिशियन, फील्ड टेक्निशियन, दर्जी, फिटर भी शामिल हैं।

कूरियर डिलिवरी, नर्स, एकाउंट एक्जीक्यूटिव, मैनुअल क्लीनर और सेल एसोसिएट्स की मांग सबसे ज्यादा।

आंकड़े बताते हैं कि कर्नाटक, दिल्ली, हरियाणा, तेलंगाना और तमिलनाडु में कामगारों की जबरदस्त कमी है।

14-21 अगस्त के बीच ASEEM पोर्टल 7 लाख रजिस्ट्रेशन हुए। नौकरी के पैमाने पर खरे उतरे महज 691.

14-21 अगस्त के बीच पंजीकृत मजदूर 2.97 लाख से बढ़कर आंकड़ा 3.78 लाख हो गये। जिन्हें वास्तव में नौकरी मिली, उनकी संख्या 7,009 से 7,700 ही हो सकी। महज 9.87 प्रतिशत की बढ़ोतरी।

14-21 अगस्त के बीच पोर्टल पर पंजीकृत लोगों की संख्या 11.98 प्रतिशत बढ़ गयी। यह 61.67 से 69 लाख हो गयी।

2017	58,373	19,587
कुल	2,32,741	94,578

रेलवे ने अपने महाप्रबंधकों को चिट्ठी लिखकर 50 फीसदी रिक्तियां कम करने का निर्देश दिया है। हालांकि यह भी साफ किया है कि किसी को नौकरी से निकाला नहीं जाएगा, लेकिन जॉब प्रोफाइल बदल सकता है। जाहिर है एक दबाव की स्थिति कर्मचारियों में होगी। जॉब प्रोफाइल बदलने पर कई लोगों के लिए काम करना मुश्किल हो जाएगा। 2019 में ही रेलवे ने 3 लाख कर्मचारी कम करने की घोषणा की थी, मगर उस पर अब तक अमल नहीं हो पाया है।

रेलवे में एक और प्रयोग शुरू हुआ है। यह भी बेरोजगारी बढ़ाने वाला है। रेलवे अपने सेवानिवृत्त कर्मचारियों को काम पर रख रहा है। और, औने-पौने दाम पर रख रहा है। यह एक तरह से क्वालिटी का दुरुपयोग भी है और युवाओं से नौकरी छीनने का प्रयास भी। महज इसलिए कि श्रम पर खर्च को बचाया जाए। द प्रिंट में छपी एक रिपोर्ट में उत्तर रेलवे के एक वरिष्ठ अधिकारी के हवाले से कहा गया है कि उत्तर रेलवे में एक हजार पुराने कर्मचारियों को ड्यूटी पर इसलिए

रेलवे अपने सेवानिवृत्त कर्मचारियों को काम पर रख रहा है। और, औने-पौने दाम पर रख रहा है। यह एक तरह से क्वालिटी का दुरुपयोग भी है और युवाओं से नौकरी छीनने का प्रयास भी।

रखा गया क्योंकि स्टाफ कम थे। सवाल ये है कि जब स्टाफ कम हैं तो नियुक्तियां क्यों नहीं हो रही हैं? हद तो तब हो गयी जब रेलवे ने अपने उन तमाम पुराने कर्मचारियों को कोविड 19 की महामारी के दौर में महज 15 दिन के नोटिस पर नौकरी से निकाल भी दिया।

लाचार दिख रही है सरकार

सरकारी नीतियों में जो हताशा दिख रही है वह परिस्थिति को और गंभीर बना रही है। नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी बेरोजगारी की समस्या का समाधान नहीं हो सकती। यह रोजगार देने की प्रक्रिया का हिस्सा मात्र भर है। मगर, इसे ऐसे पेश किया जा रहा है मानो अब रोजगार पाना आसान हो गया हो। सच यह है कि जब रिटायर हो रहे लोगों की जगह नियुक्तियां नहीं होंगी, नये पद नहीं बनाए जाएंगे और श्रम की कमी को कैजुअल तरीके से रिटायर हो चुके कर्मचारियों से पूरा किया जाएगा, तो एनआरए जैसी संस्था बनाने का क्या फायदा?

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन और एशियन डेवलपमेंट बैंक ने 18 अगस्त को अपनी एक रिपोर्ट में आगाह किया है कि भारत में कोरोना की महामारी के दौरान सितंबर के अंत तक 61 लाख लोगों की नौकरी जा सकती है। 25 साल से कम के युवाओं में 32.5 फीसदी बेरोजगारी की दर हो सकती है। इसका मतलब ये है कि 25 साल से कम के युवाओं में हर तीसरे युवा को बेरोजगार रहना होगा। क्या नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी इस स्थिति को दूर करने में कोई मदद करेगी?

समाजवादी संस्कारों में बसा है पर्यावरण प्रेम

बुलेटिन ब्यूरो

उत्तर प्रदेश में जब- जब समाजवादी सरकारों का शासन रहा तब-तब पर्यावरण संरक्षण की दिशा में ठोस कार्यवाही की गई। एक स्वस्थ समाज के लिए हरियाली की जरूरत समाजवादी संस्कारों का हिस्सा रही है। यही कारण है कि जब श्री मुलायम सिंह यादव मुख्यमंत्री रहे तब एवं जब श्री अखिलेश यादव ने सत्ता संभाली, पर्यावरण को बेहतर बनाने की दिशा में कई कार्य हुए। जिनमें प्रदेश भर में बड़े पैमाने पर हुए वृक्षारोपण अभियानों की उत्तर प्रदेश में वन क्षेत्र बढ़ाने में अहम भूमिका रही है।

श्री अखिलेश यादव जी के मुख्यमंत्रित्वकाल में लखनऊ में 500 एकड़ में बने जनेश्वर मिश्र पार्क से पर्यावरण एवं प्रकृति का सुंदरतम रूप निखर कर आया है। यह पार्क पर्यावरण संरक्षण के प्रति समाजवादी प्रतिबद्धता का सबसे बड़ा प्रमाण है। इसकी विशालता, हरियाली और आकर्षक वातावरण इसे कई विश्व विख्यात पार्कों के समकक्ष रखता है। यहां की शानदार झील, लहराता राष्ट्रीय ध्वज सभी को आकर्षित करते हैं। भारत में यह सबसे बड़ा पार्क है। अखिलेश जी की ही सरकार में लखनऊ में गोमती नदी के किनारों को संवार कर रिवर फ्रंट विकसित किया गया जिसका हरा-भरा मनोरम वातावरण सभी को खूब भाता है।

अखिलेश जी की सरकार में इटावा में बना लायन सफारी भी अनोखा है। भारत मे केवल गुजरात के जूनागढ़ में एशियाई बब्बर शेर पाया जाता है। अखिलेश जी ने अपनी सरकार के कार्यकाल में इटावा में लायन सफारी बनवाया एवं गुजरात से यहां के लिए शेर मंगवाए। 350 हेक्टर में फैला इटावा लायन सफारी पार्क एशियाई शेरों के संरक्षण के लिए एक केंद्र के रूप में विकसित हो रहा है।

यमुना के बीहड़ के किनारे बसे लायन सफारी पार्क में अपने अनुकूल वातावरण पाकर इन

शेरों का कुनबा बराबर बढ़ रहा है। पिछले चार सालों में इनकी संख्या 11 से बढ़कर 18 हो गई है। इनमें 9 नर और 9 मादा शेर हैं। इसी तरह अगर शेरों की संख्या बढ़ती रही तो अगले 10 वर्षों में यहां 50 शेर हो जाएंगे। 19 अगस्त 2020 को श्री अखिलेश यादव अपने इटावा भ्रमण के दौरान लायन सफारी भी गए। इस दौरान उनके साथ बिहार के पूर्व मंत्री व राजद नेता तेज प्रताप यादव भी मौजूद रहे।

अखिलेश जी की ही सरकार में वर्ष 2016 में पर्यटन प्रोत्साहन के साथ-साथ रोमांच के लिए आगरा से इटावा के बीच 207 किमी लंबा बाईसकिल हाईवे बनाया गया था। तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश जी ने इसका लोकार्पण किया था। सपा सरकार की यह महत्वाकांक्षी योजनाओं में से एक थी। रोमांच प्रेमी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए बाईसाइकिल हाईवे विकसित किया गया था। इसका उद्देश्य था कि पर्यटक ताजमहल का दीदार करने के बाद साइकिल से चंबल के बीहड़ के नजारे देखते हुए इटावा स्थित लायन सफारी तक पहुंचे। रास्ते में ग्रामीण परिवेश को देख सके। मगर, भाजपा सरकार ने इस ट्रैक की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। कहने को तो बाईसाइकिल हाइवे है लेकिन इस पर साइकिल तो दूर पैदल तक चलने के लिए जगह नहीं है। इसका अधिकांश हिस्सा अतिक्रमण से घिरा है। कई जगह से टूट गया है। देखरेख के अभाव में शेष हिस्से पर रेत का ढेर लग गया है। प्रदेश में अगले चुनावों में समाजवादियों की सत्ता में वापसी होते ही निश्चय ही इस साइकिल ट्रैक को पुन: उसके मूल स्वरूप में वापस लाया जाएगा।

ऐतिहासिक अगस्त जनक्रांति

मधुकर त्रिवेदी
वरिष्ठ पत्रकार

अंग्रेजी राज के खिलाफ विद्रोह और आजादी की लड़ाई में दो तिथियां हमेशा याद रहेंगी। सन् 1857 में पहली विद्रोह की चिंगारी फूटी थी। इसकी पूर्णाहुति 1942 में हुई जब गांधी जी ने 9 अगस्त को मुम्बई में 'करो या मरो' का मंत्र दिया। अंग्रेजो को 'भारत छोड़ों' की यह अंतिम चेतावनी थी। फलस्वरूप देश 15 अगस्त 1947 को आजाद हो सका। भारत छोड़ो आन्दोलन को अगस्त क्रांति के नाम से भी याद किया जाता है।

उन दिनों दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो गया था। जापान दक्षिण पूर्व एशिया में जीत पर जीत दर्ज कर रहा था। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस जर्मनी, जापान के साथ सैन्य अभियान में शामिल थे। आजाद हिंद फौज के प्रति देश में भावात्मक लगाव था। उन दिनों ब्रिटेन में चर्चिल की सरकार थी जो भारत की आजादी के बारे में सोचना भी नहीं चाहती थी। क्रिप्स मिशन के माध्यम से भारत का समर्थन युद्ध प्रयासों में प्राप्त करने के प्रस्तावों से देश में निराशा और क्षोभ का वातावरण था। महंगाई ने लोगों की कमर तोड़ दी थी। इस बीच अमरीकी सेनाएं भी भारत में आ गई थीं। 5 जुलाई 1942 को गांधी जी ने हरिजन में लिखा 'अंग्रेजों, भारत को जापान के लिये मत छोड़ो लेकिन भारत को भारतीयों के लिये व्यवस्थित रूप से छोड़ जाओ।'

8 अगस्त 1942 को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कमेटी की बैठक मुम्बई में हुई। इसमें यह निर्णय किया गया कि भारत अपनी सुरक्षा स्वयं कर सकता है। अंग्रेज भारत छोड़ दें। उनके जाने के बाद अस्थाई सरकार बनेगी। ब्रिटिश सरकार को हटाने के लिये नागरिक अवज्ञा आन्दोलन छेड़ा

जायेगा। इसके नेता गांधी जी होंगे। मुम्बई के ऐतिहासिक ग्वालिया टैंक में इस भारत छोड़ो प्रस्ताव के अंत में कहा गया था कि देश ने साम्राज्यवादी सरकार के विरूद्ध अपनी इच्छा जाहिर कर दी है। अब उसे उस बिंदु से लौटाने का कोई औचित्य नहीं है। अतः कांग्रेस अहिंसक ढंग से, व्यापक धरातल पर गांधी जी के नेतृत्व में जनसंघर्ष शुरू करने का प्रस्ताव शुरू करती है।

गांधी जी ने इस प्रस्ताव पर 70 मिनट तक अपने विचार रखे। उन्होंने वहां उपस्थित हजारों लोगों के बीच कहा-''मैं आपको एक मंत्र देता हूं- करो या मरो।' जिसका अर्थ था भारत की जनता आजादी के लिये हर ढंग से प्रयास करे और इसके लिये अपनी कुर्बानी भी दे। उन्होंने कहा, वह लोग जो कुर्बानी नहीं दे सकते हैं, आजादी नहीं पा सकते हैं।" भाषण के अंत में गांधी जी ने कहा था ''अबकी जो लड़ाई छिड़ेगी, वह सामूहिक लड़ाई होगी। हमारी योजना में गुप्त कुछ नहीं है। हमारी तो खुली लड़ाई है। हम एक साम्राज्य से लड़ाई लड़ने जा रहे हैं और हमारी लड़ाई बिल्कुल सीधी लड़ाई होगी। इस बारे में आप किसी भ्रम में न रहें।"

8 अगस्त का प्रस्ताव पारित होते ही ब्रिटिश सरकार हरकत में आ गई। 9 अगस्त 1942 की सुबह तड़के ही गांधी जी सहित कांग्रेस के बड़े नेताओं की गिरफ्तारी शुरू हो गई। अभी सुबह के पांच भी नही बजे थे कि गांधी जी के आवास को पुलिस ने घेर लिया। पुलिस के सिपाही दीवारें

गांधी जी ने कहा था ''अबकी जो लड़ाई छिड़ेगी, वह सामूहिक लड़ाई होगी। हमारी योजना में गुप्त कुछ नहीं है। हमारी तो खुली लड़ाई है। हम एक साम्राज्य से लड़ाई लड़ने जा रहे हैं और हमारी लड़ाई बिल्कुल सीधी लड़ाई होगी। इस बारे में आप किसी भ्रम में न रहें।"

फांदकर अंदर पहुंच गए। नेहरू जी, मौलाना आजाद आदि को गिरफ्तार कर जेल पहुंचा दिया गया। कांग्रेस को गैर कानूनी संस्था घोषित कर दिया गया। जुलूसों पर रोक लगा दी गई। 9 अगस्त की भोर में देश भर में खुले विद्रोह का बिगुल बज गया। बंबई में, ग्वालियर टैंक में जब अरूणा आसफ अली ने तिरंगा फहराने की कोशिश की तो पुलिस ने लाठियां बरसाई। यह खबर देशभर में आग की तरह फैल गई।

गांधी जी ने अपने ऐतिहासिक आह्वान में पत्रकारों से कहा था कि वे वर्तमान पाबंदियों के रहते लिखना छोड़ देंगे और तभी कलम को हाथ लगाएंगे जब भारत स्वतंत्र हो जाएगा। सरकारी कर्मचारियों से, कहा वे नौकरी न छोड़े लेकिन दमनात्मक गोपनीय परिपत्रों पर अमल न करें। विद्यार्थियों से अपेक्षा की कि वे शिक्षकों से कह दें कि वे कांग्रेस के साथ हैं और आजादी के संघर्ष में शामिल हों। बापू ने सैनिकों से कहा कि वे उचित हुक्म तो मानें लेकिन अपने देशवासियों पर गोली चलाने से इंकार कर दें।

यहां एक ऐतिहासिक घटना चक्र का बयान भी जरूरी है। इलाहाबाद में 27 अप्रैल 1942 को कांग्रेस कार्यसमिति को भेजे एक प्रस्ताव में गांधी जी ने कहा था कि ब्रिटेन ने भारत की इच्छा के विरूद्ध उसे युद्ध में घसीट लिया है, वह भारत की सुरक्षा में असमर्थ है, इसके विपरीत भारत अपनी रक्षा में समर्थ है। इस प्रस्ताव के पक्ष में न तो नेहरू जी थे, न राजाजी और न मौलाना आजाद। वे समझते थे इससे हम जापान-जर्मनी के पक्ष में खड़े दिखाई देंगे। फासिस्ट विरोधी नेहरू जी ब्रिटेन और जापान को एक तराजू पर तौलने के प्रति संदेहशील थे।

वहीं गांधी जी का मत था कुछ भी हो अंग्रेज जाएं। अपने से भिन्न मत रखने पर एक बार तो गांधी जी ने नेहरू और मौलाना आजाद से इस्तीफा तक मांग लिया था। लेकिन चूंकि कोई तब कांग्रेस में दरार नहीं चाहता था इसलिए अंत

में सबने तय किया कि संघर्ष में गांधी जी के नेतृत्व में चलना अनिवार्य हैं। कांग्रेस ने गांधी जी से राष्ट्र का नेतृत्व और पथ प्रदर्शन करने की प्रार्थना की। इसके प्रस्तावक नेहरू जी थे जबकि प्रस्ताव का समर्थन सरदार पटेल ने किया। नेहरू जी ने कहा- ''अब तो हम आग में कूद पड़े हैं। या तो सफल होकर निकलेंगे या उसी में जलकर भस्म हो जाएंगे।''

अगस्त के आंदोलन में श्री जय प्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया की भूमिका कम महत्वपूर्ण नही रही। डॉ लोहिया ने आजाद रेडियों से प्रसारण शुरू किया। जय प्रकाश जी उस समय हजारीबाग सेंट्रल जेल में बंद थे। 11 नवम्बर 1942 को दीवाली की रात वे पांच साथियों के साथ जेल की दीवार फांदकर निकल भागे। काफी समय वे और डा॰ लोहिया नेपाल में छुपे रहे किंतु बाद में पकड़े गए। इनकी चर्चा से देश आंदोलित हो उठा तो ब्रिटिश सरकार के पांव कांपने लगे।

इस दौरान दो उल्लेखनीय घटनाएं और हुईं। ब्रिटिश सरकार ने 13 फरवरी 1943 को कांग्रेस और गांधी जी पर अगस्त आन्दोलन के दौरान की हिंसक घटनाओं का दोष मढ़ दिया। गांधी जी ने इसका प्रतिवाद करते हुये घटनाओं की निष्पक्ष

> **अगस्त के आंदोलन में श्री जय प्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया की भूमिका कम महत्वपूर्ण नही रही। डॉ. लोहिया ने आजाद रेडियों से प्रसारण शुरू किया। जय प्रकाश जी उस समय हजारीबाग सेंट्रल जेल में बंद थे। 11 नवम्बर 1942 को दीवाली की रात वे पांच साथियों के साथ जेल की दीवार फांदकर निकल भागे।**

जांच की मांग की। 10 फरवरी 1943 से गांधी जी उपवास पर बैठ गये। इस बीच वायसराय कौंसिल से भी कई सदस्य विरोध स्वरूप हट गये।

इसी बीच आजाद हिंद फौज के गठन और नेता जी सुभाष चंद्र बोस के '' दिल्ली चलो'' आह्वान ने सनसनी फैला दी थी। नेता जी के नज़रबंदी से गायब हो जाने की रोमांचक कहानी से देशवासी उत्साहित थे और ब्रिटिश सरकार डर गई थी। उधर ब्रिटेन में लेबर पार्टी की सरकार भी बन गई थी जो भारत की आजादी की पक्षधर थी। अंततः भारत 15 अगस्त 1947 को आजाद तो हुआ लेकिन ब्रिटिश कूटनीति ने आजादी को खंडित कर जिन्ना के द्विराष्ट्र सिद्धांत को मानकर पाकिस्तान का भी निर्माण करा दिया।

अगस्त क्रांति के प्रभाव का मूल्यांकन और अधिक शोध के साथ किये जाने की जरूरत है। जवाहर लाल नेहरू के एक आंकड़े के अनुसार सन् 1942 में 60 हजार से अधिक लोगों को गिरफ्तार किया गया। 10 हजार लोग मारे गये। लेकिन जनपदों के सुदूर क्षेत्रों में तत्कालीन सरकार के उत्पीड़न के शिकार बहुतों की कहानी अनकही रह गयी है। जेल यातना में कितने ही परिवार बिखर गए थे।

ब्रिटिश सरकार की रिपोर्ट थी कि उस समय 60 हजार गिरफ्तार हुए, 18 हजार बिना अभियोग चलाए नज़रबंद हुए, जिनमें 90 की मौत हो गई। 250 रेलवे स्टेशनों पर हमले हुए। 50 डाकखाने जला दिए गए।150 पुलिस चैकियों पर हमले हुए, 30 से ज्यादा सिपाही मरे।

वस्तुतः इस आंदोलन में ब्रिटिश सरकार ने अपनी बर्बरता की हद कर दी थी। देहाती इलाकों में सामूहिक जुर्माना लगाकर कुर्की-वसूली की गई। छात्रों को घेरकर उनके सीने पर संगीनें रखकर गोलियां चलाई गईं। उनके नंगे बदन पर बेंत लगाते थे। स्त्रियों के साथ बलात्कार की तमाम घटनाएं घटीं। उड़ीसा में पुरूषों और स्त्रियों को सर्वथा नंगा करके पेड़ों से टांग दिया गया और उनके कपड़ों में आग लगा दी गई। मुंगेर, बलिया में हवाई जहाज से गोले बरसाकर स्वाधीनता की आवाज को कुचलने की कोशिश हुई।

इसमें दो राय नहीं कि गांधी जी के ''करो या मरो'' के आह्वान पर पूरा देश एक धधकता ज्वालामुखी बन गया था। 1857 की क्रांति में मेरठ के सिपाहियों से हथियार छीन लिए गए थे। उनके विद्रोह के फलस्वरूप ईस्ट इण्डिया कम्पनी का राज खत्म हुआ था। 1942 में ब्रिटिश सरकार ने निहस्थी जनता को कुचला, गांवों को जलाया, घरों में लूट की, महिलाओं को सरेआम बेइज्जत किया, अंधाधुंध गिरफ्तारियां की, बच्चों को भी गोलियां मारी। आक्रोशित जनता ने तब अपने हाथों में क्रांति की मशाल थाम ली।

कांग्रेस के वरिष्ठ नेता श्री गोविन्द सहाय ने तब ''सन् बयालीस का विद्रोह'' पुस्तक में लिखा था ''सन् 1857 का गदर, फ्रांसीसी राज्यक्रांति, सन्

1942 में ब्रिटिश सरकार ने निहस्थी जनता को कुचला, गांवों को जलाया, घरों में लूट की, महिलाओं को सरेआम बेइज्जत किया, अंधाधुंध गिरफ्तारियां की, बच्चों को भी गोलियां मारी। आक्रोशित जनता ने तब अपने हाथों में क्रांति की मशाल थाम ली।

1917 की रूसी लालक्रांति सभी कितनी ही बातों में उसके सामने फीके जान पड़ते हैं। सन् 42 का खुला विद्रोह पुराने सब प्रयत्नों से ध्येय, नीति निपुणता, संगठन, बलिदान और जनोत्साह सभी मामलों में कहीं बढ़ा-चढ़ा है। यह वह सामूहिक प्रयत्न था, जिसकी चिंगारी गांव-गांव फैल गई थी। ऐसा लगता था कि सारा राष्ट्र गहरी नींद से जागकर एकाएक उठ खड़ा हुआ है।''

डा॰ राममनोहर लोहिया अगस्त क्रांति को बेहद महत्वपूर्ण मानते थे। उन्होंने 2 अगस्त 1967 को डा॰ जी.जी. पारीख को लिखे गये पत्र में कहा था '15 अगस्त राज्य दिवस है, 9 अगस्त जनदिवस है। कोई दिन जरूर आएगा जब 9 अगस्त के सामने 15 अगस्त फीका पड़ेगा और जिस तरह अमेरिका में 4 जुलाई और फ्रांस में 14 जुलाई उनका जनदिवस है, उसी प्रकार एक दिन हिन्दुस्तान 9 अगस्त को जनदिवस मनाएगा। अगस्त क्रांति की 75वीं वर्षगांठ पर हम उनका श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं, जिनके बलिदानों से हम आज संप्रभु राष्ट्र की खुली हवा में सांस ले रहे हैं।

उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020

दुरुपयोग के बड़े आसार

क़ानूनी पहलू

देवेन्द्र उपाध्याय

एडवोकेट

उत्तर प्रदेश की भारतीय जनता पार्टी की सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश विषेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020 लाया गया है जो 28 अगस्त 2020 को राज्यपाल महोदय की अनुमति प्राप्त होने के बाद से प्रभावी हो गया है, परन्तु उक्त अधिनियम के अनुसार यह दिनांक 06 अगस्त, 2020 से प्रवृत्त हुआ समझा जायेगा। जिसका मुख्य उपबन्ध धारा-10 (1) क है, जिसके दुरुपयोग से आम जन मानस प्रभावित हो सकता है। जिसमें विशेष सुरक्षा बल को बिना वारंट गिरफ्तार करने की शक्ति प्राप्त है।

उक्त शक्ति के अनुसार विशेष सुरक्षा बल के सदस्य द्वारा अपने कर्तव्यों का निष्पादन या अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने से उसे रोकने के आशय से कोई व्यक्ति जानबूझकर उपहति करेगा यानि चोट पहुंचाएगा, उपहति करने का प्रयास करेगा या सदोष अवरोध करेगा या सदोष अवरोध कारित करने का प्रयास करेगा या हमला करेगा, हमला करने की धमकी देगा या आपराधिक बल का प्रयोग, धमकी देने या धमकी देने का प्रयास करेगा उस व्यक्ति को विशेष सुरक्षा बल द्वारा बिना वारंट गिरफ्तार किया जा सकता है।

धमकी देने का प्रयास करना किसी अपराध मे परिभाषित नहीं किया गया है। यानी हम यहां यह मान लें कि यदि कोई व्यक्ति विशेष सुरक्षा बल के सदस्य को धमकी देने के बारे में मन में विचार तक ले आए तो उस व्यक्ति को विशेष सुरक्षा बल के सदस्य द्वारा बिना वारंट के गिरफ्तार कर लिया जायेगा। यदि कोई किसी प्रतिष्ठान में जाता है और उसकी साधारण सी बहस किसी बात पर विशेष सुरक्षा बल से हो जाती है तो वह उस साधारण व्यक्ति को बिना वारंट गिरफ्तार कर सकता है। बिना वारंट के गिरफ्तार करने की शक्तियों में उपरोक्त सभी अपराध प्रथमदृष्टया सात वर्ष से कम की सजा वाले अपराध हैं जिसमें साधरणतया पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा-41 मे दी गयी प्रक्रिया के बिना किसी को गिरफ्तार नही किया जा सकता है। यानी सात वर्ष से कम की सजा वाले अपराध में किसी व्यक्ति

की गिरफ्तारी से पहले उस व्यक्ति को धारा-41 क, की नोटिस दिया जाना आवश्यक है।

उक्त प्रावधान लॉ कमीशन की 152वीं,154वीं व 177वीं रिपोर्ट के आधार पर दिनांक 01.11.2010 में दंड प्रक्रिया संहिता में संशोधन के बाद जोड़ा गया था। उक्त प्रावधान को लाने का मुख्य उद्देश्य पुलिस द्वारा बिना वारंट गिरफ्तार किये जाने की शक्तियों के दुरुपयोग को रोकना था। जिसका संज्ञान माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा क्रिमिनल अपील संख्या-1277/2014, अरनेश कुमार बनाम बिहार राज्य व अन्य में पारित निर्णय दिनांक 02.07.2014 में लिया गया है। जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय के अनुपालन हेतु समस्त राज्यों के मुख्य सचिव, पुलिस महानिदेशक व समस्त माननीय उच्च न्यायालयों के रजिस्ट्रार जनरल को निर्णय की प्रतिलिपि भेजी गई थी। जिसमें यह निर्देश दिया गया था कि समस्त राज्यों की पुलिस को सात वर्ष से कम की सजा वाले अपराध में किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी से पहले उस व्यक्ति को दो सप्ताह के अन्दर धारा-41 क, की नोटिस दिया जाना आवश्यक है ।

उक्त प्रक्रिया का पालन न किये जाने पर उस पुलिस अधिकारी के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही किये जाने के निर्देश माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिये और यह भी कहा कि उक्त पुलिस अधिकारी के द्वारा किया गया उक्त कृत्य अवमानना की श्रेणी में आता है। परन्तु उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020 मे बिना वारंट गिरफ्तारी की शक्तियों में धारा-41 का जिक्र तक नहीं किया गया है। अतः उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020 में बिना वारंट गिरफ्तारी की शक्तियों का प्रावधान भारतीय संविधान के प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण के अधिकार को कम करता है।

विशेष सुरक्षा बल को बिना वारंट गिरफ्तार करने की शक्ति प्रदान किये जाने के बाद भी उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020 की धारा-12 के अनुसार गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को बल द्वारा पुलिस

उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल अधिनियम, 2020 में बिना वारंट गिरफ्तारी की शक्तियों का प्रावधान भारतीय संविधान के प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण के अधिकार को कम करता है।

को दिये जाने का प्रावधान है। यदि विशेष सुरक्षा बल को बिना वारंट गिरफ्तार की शक्ति न भी प्रदान की गई होती तो भी विशेष सुरक्षा बल संदिग्ध व्यक्ति को पकड़कर पुलिस के हवाले ही करता। अतः सरकार द्वारा विशेष सुरक्षा बल को बिना वारंट गिरफ्तार करने की शक्ति प्रदान किये जाने का अर्थ समझना मुश्किल है। अतः सरकार व विशेष सुरक्षा बल द्वारा उक्त शक्तियों के दुरुपयोग की सम्भावना बढ़ जाती हैं।

जब उत्तर प्रदेश विशेष सुरक्षा बल का गठन किसी निकाय या किसी व्यक्ति या राज्य सरकार द्वारा किसी नाम, नामावली या श्रेणी द्वारा अधिसूचित उसके आवासीय परिसर, माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद एवं लखनऊ खण्डपीठ, जिला न्यायालयों, राज्य सरकार द्वारा यथा अधिसूचित किसी अन्य न्यायालय, महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों, औद्योगिक उपक्रमों, पूजा स्थलों, प्रशासनिक परिसरों, मेट्रो, हवाई अड्डो, बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं तथा इस प्रयोजनार्थ राज्य सरकार द्वारा इस रुप में अधिसूचित किन्ही अन्य प्रतिष्ठानों या अधिष्ठानों की संरक्षा और सुरक्षा करना है तो विशेष सुरक्षा बल को साधारण भाषा में उपरोक्त प्रतिष्ठानों का सुरक्षा बल कहा जा सकता है। ऐसे में उक्त साधारण सुरक्षा बल को बिना वारंट तलाशी की शक्ति प्रदान किए जाने से उक्त विशेष सुरक्षा बल के दुरुपयोग की मंशा झलकती है।

यहां यह भी प्रश्न उठता है कि कई जगह आ रही खबरों के अनुसार उक्त विशेष सुरक्षा बल का गठन न्यायालय व वकीलों पर हो रहें हमलों व वकीलों की हत्याओं पर माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद की टिप्पणी के बाद किया गया है, तो उत्तर प्रदेश के वकीलों व बार काउंसिल कार्यालय की सुरक्षा को इसमें शामिल क्यों नहीं किया गया? क्योंकि उक्त अधिनियम की धारा-8 (ग) में उपरोक्त अधिष्ठानों के कर्मचारियों की संरक्षा तथा रक्षोपाय करना दर्शाया गया है। उत्तर प्रदेश के वकीलों की सुरक्षा का नाम तक नही लिया गया है। जिससे उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा विशेष सुरक्षा बल का गठन किसी अन्य प्रयोजन व दुरुपयोग करने के लिये प्रतीत होता है।

साफ़ और बेबाक

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

Socialist Leader of India. Chief Minister of UP (2012 - 2017)

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

स्वतंत्रता सेनानी, प्रखर चिंतक एवं समाजवादी विचारधारा के पुरोधा डॉ. राम मनोहर लोहिया जी की पुण्यतिथि पर श्रद्धापूर्वक नमन एवं भावभीनी श्रद्धांजलि!

Translate Tweet

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

आज देश में हम परिवारवालों को अपनी बहन-बेटियों की रक्षा के लिए एक साथ आना होगा तभी सत्ता की अहंकारी नींद टूटेगी.

बलात्कार के हर मामले में चाहे वो हाथरस हो, बारां या बलरामपुर हर सरकार को धर्म, जाति, वर्ग, वोट व प्रभाव की पक्षपाती राजनीति छोड़ महिला-सुरक्षा का संकल्प लेना होगा.

Translate Tweet

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

उप्र की नाकाम भाजपा सरकार महिला-अपराधों में ये दिखाकर बच रही है कि ये आपसी संबंधों और रिश्तेदारों के बीच की घटनाएँ हैं न कि अपराधियों द्वारा की जानेवाली.

सपा के समय की कारगर 1090 व यूपी 100 को निष्प्रभावी बनाकर भाजपा सरकार राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता में जनता का हनन कर रही है.

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

Happy Indian Air Force Day!

On this occasion wishing great heights & greater flights to our flying-soldiers and every proud Indian citizen!

#AFDay2020
#AirForceDay
@IAF_MCC

Following

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

अयोध्या में एयरपोर्ट हेतु गरीबों-किसानों की भूमि के अनुचित मुआवज़े के अन्याय के ख़िलाफ़, परिवारवालों का अपने परिवार के भविष्य की चिंता को लेकर महिलाओं के नेतृत्व में कटोरा-चम्मच लेकर विरोध प्रदर्शन दुर्भाग्यपूर्ण है.

भाजपा सरकार को पुण्य के कार्य में तो ईमानदारी बरतनी चाहिए.

Translate Tweet

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

उप्र की नाकाम भाजपा सरकार महिला-अपराधों में ये दिखाकर बच रही है कि ये आपसी संबंधों और रिश्तेदारों के बीच की घटनाएँ हैं न कि अपराधियों द्वारा की जानेवाली.

सपा के समय की कारगर 1090 व यूपी 100 को निष्प्रभावी बनाकर भाजपा सरकार राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता में जनता का हनन कर रही है.

Akhilesh Yadav
@yadavakhilesh

बलिया में सत्ताधारी भाजपा के एक नेता के, एसडीएम और सीओ के सामने खुलेआम, एक युवक की हत्या कर फ़रार हो जाने से उप्र में क़ानून व्यवस्था का सच सामने आ गया है.

अब देखें क्या एनकाउंटरवाली सरकार अपने लोगों की गाड़ी भी पलटाती है या नहीं.

#नहीं_चाहिए_भाजपा

पंजीकृत डाक पंजीकरण संख्या LW/NP-300/2018-2020

सपा का परचम
गली गली लहराएगा

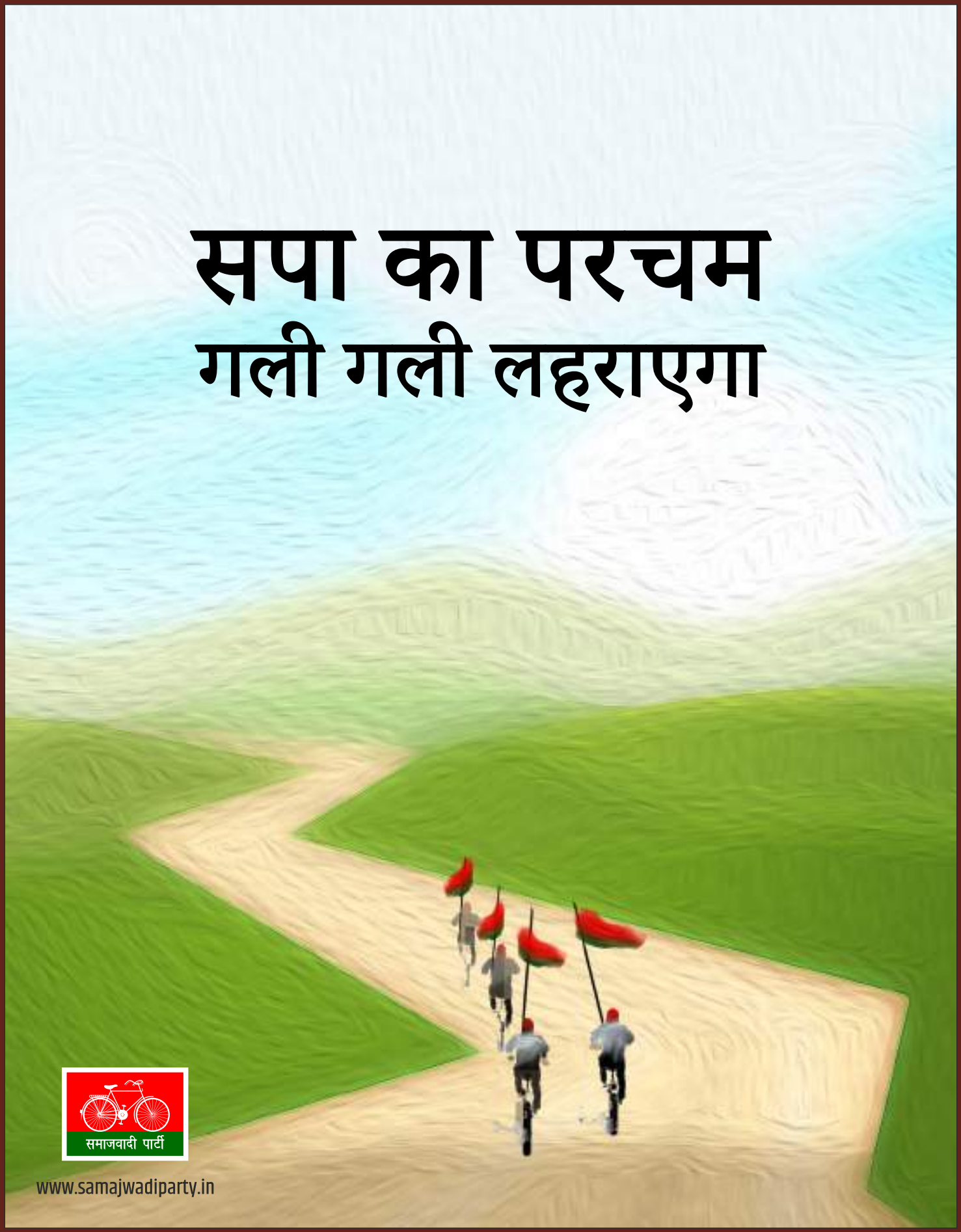

समाजवादी पार्टी

www.samajwadiparty.in